योगविद्या

वर्ष 13 अंक 10
अक्टूबर 2024

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरिः ॐ

योगविद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2024

उपयोगी संसाधन

वेबसाइट :

www.biharyoga.net
www.sannyasapeeth.net
www.satyamyogaprasad.net

एप्प : (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)
Bihar Yoga
APMB
YOGA (अंग्रेजी पत्रिका)
YOGAVIDYA (हिन्दी पत्रिका)
FFH (For Frontline Heroes)

कुल पृष्ठ संख्या : 56 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर एवं अन्दर के प्लेट: सत्यम् दर्शन

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

क्या तुमने कभी इस मानव जीवन की महत्ता और महानता पर विचार किया है? क्या कभी इस बात को समझने का प्रयास किया है कि मानव जन्म एक अनमोल उपहार, एक दिव्य विरासत है? क्या तुम यह अनुभव नहीं करते कि जीवन किसी विशिष्ट उद्देश्य को पूरा करने के लिए बना है? वास्तव में यह एक उदात्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही बना है – दिव्यता, पूर्णता तथा शाश्वत शान्ति एवं आनन्द की प्राप्ति।

जीवन मात्र खाने-पीने, सोने-जागने, सोच-विचार करने और अनुभव करने की प्रक्रिया नहीं है। जीवन का प्रयोजन यह नहीं कि तुम बिना किसी ठोस उपलब्धि को प्राप्त किए मर जाओ। तुम्हारा जीवन तभी सफल है जब तुम मानसिक समत्व एवं ब्रह्म-ज्ञान को प्राप्त करने का प्रयास करते हो और साथ ही मानवता के कल्याण के लिए सेवा-कार्य करते हो।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद–121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योगविद्या

वर्ष 13 अंक 10 अक्टूबर 2024
(प्रकाशन का 62 वाँ वर्ष)

विषय सूची

4 चरित्र निर्माण
9 योग से स्मृति-लाभ
12 बुद्धि, भावना एवं कर्म का समन्वय
18 अनाहत योग स्वास्थ्य एवं शिक्षा न्यास – न्यूज़ीलैंड
20 शास्त्र ही प्रमाण हैं
25 टूल्स फॉर इनर पीस – यूनाइटेड किंगडम
26 दिव्य जीवन मंडल – उद्देश्य * कार्यक्रम * प्रवृत्तियां * सन्देश
34 कामधेनु आश्रम – कोलोम्बिया
35 सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम्
40 उच्च रक्तचाप का गैर-औषधीय उपचार
46 योग सूत्र मीमांसा

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

चरित्र निर्माण

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

मनुष्य का शरीरान्त होने पर भी उसका चरित्र बना रहता है, उसके विचार बने रहते हैं। चरित्र ही मनुष्य में वास्तविक शक्ति और शौर्य का स्फुरण करता है। कहा जाता है कि ज्ञान पर्याय है शक्ति का, पर मैं कहता हूँ कि चरित्र ही शक्ति का पर्याय है। यदि चरित्र का अर्जन नहीं किया गया तो ज्ञान का अर्जन भी नहीं किया जा सकता। चरित्रहीन व्यक्ति और जीवनविहीन मुर्दे में कुछ भी अन्तर नहीं है। समाज के लिए वह घृणास्पद है। यदि जीवन में सफलता की कामना है, दूसरों को प्रभावित करने की आकांक्षा है, आध्यात्मिक मार्ग पर बढ़ने की अभिलाषा है और आत्मज्ञान प्राप्त करने की लगन है तो निष्कलंक चरित्र का उपार्जन करो। चरित्र मनुष्य जीवन का सारांश है। मनुष्य का चरित्र ही सदा जीवित रहता है और मनुष्य को जीवित रखता है। अपने अलौकिक चरित्र के कारण ही आज अनेक शताब्दियों के बीत जाने पर भी शंकराचार्य, भगवान् बुद्ध, ईसामसीह और अन्य ऋषि हमें याद आते हैं। अपनी चरित्र-शक्ति के आधार पर ही वे जन-समाज की विचारधाराओं का निर्माण कर पाए।

चरित्र और धन की तुलना हो ही नहीं सकती। कहाँ एक ओर चरित्र, एक सुरभिपूर्ण सुन्दर पुष्प, एक शक्तिशाली उपकरण, और कहाँ दूसरी ओर धन, एक चंचल वस्तु और कलह का आदिमूल! महान् विचारों तथा उज्ज्वल चरित्र वाले व्यक्ति का ओज प्रभावशाली होता है। व्यक्तित्व का निर्माण चरित्र से ही होता है। कोई कितना ही निपुण गायक, कलाकार, कवि या वैज्ञानिक क्यों न हो, पर यदि वह चरित्रवान् न हुआ तो समाज में उसके लिए सम्माननीय स्थान का सदा अभाव ही रहता है। समाज उसकी अवहेलना ही करेगा।

चरित्र एक व्यापक शब्द है। साधारणतः चरित्र का अर्थ होता है नैतिक सदाचार। जब हम कहते हैं कि अमुक व्यक्ति चरित्रवान् है तो हमारा तात्पर्य होता है कि वह नैतिक सदाचारशील है। चरित्र का व्यापक अर्थ लिया जाय तो वह व्यक्ति की दयालुता, सत्यप्रियता, उदारता, क्षमाशीलता और सहिष्णुता का द्योतक होता है। चरित्रवान् व्यक्ति में सभी दैवी गुणों का समावेश रहता है। नैतिक दृष्टिकोण से तो वह सिद्ध होगा ही, साथ-साथ दैवी गुणों का विकास भी उसमें पूर्णतया होगा।

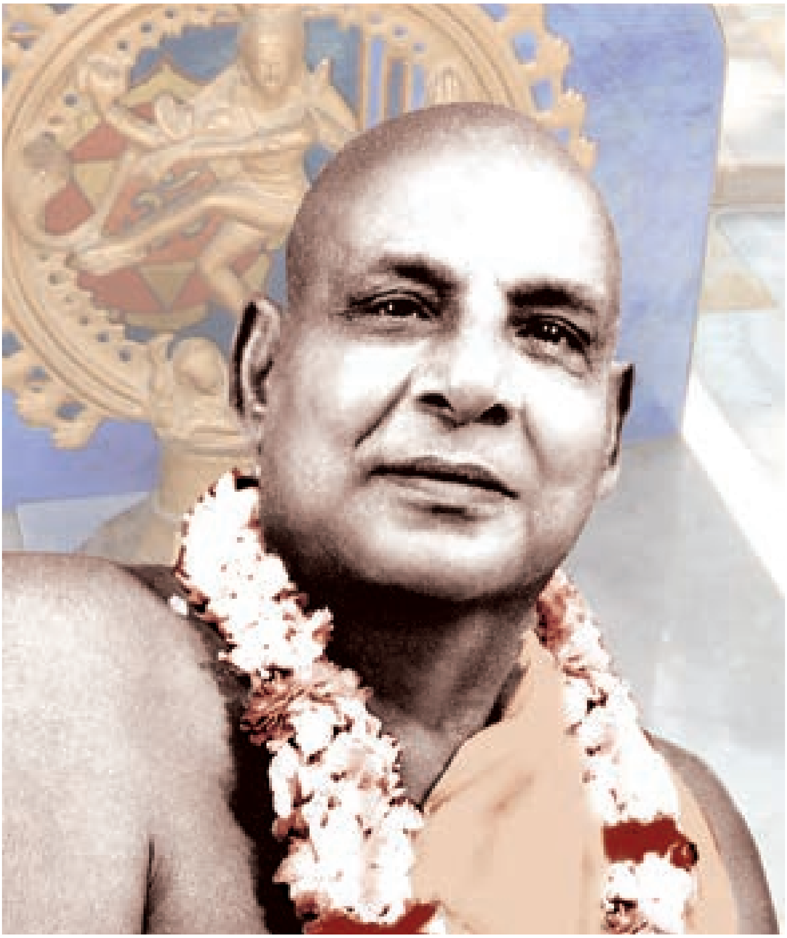

जानबूझ कर असत्य भाषण करना, स्वार्थी और लोलुप होना, दूसरों के दिलों को चोट पहुँचाना – इन सबसे मनुष्य के दुश्चरित्र का बोध होता है। अपने चरित्र का विकास करने के लिए व्यक्ति को सर्वांगीण उन्नति करनी होगी। चरित्र के विकास के लिए गीता के बारहवें और सोलहवें अध्याय में बतलाये गये दैवी गुणों की साधना करनी होगी। तभी वह सिद्ध व्यक्ति बन सकता है। ऐसे ही व्यक्ति को निष्कलंक चरित्रशील कहा जाता है। निष्कलंक चरित्र का निर्माण करने के लिए निम्नलिखित गुण उपार्जित किये जाने चाहिए – नम्रता, निष्कपटता, अहिंसा, क्षमाशीलता, गुरुसेवा, पवित्रता, सत्यशीलता, आत्म-संयम, विषयों के प्रति अनासक्ति, निरहंकारिता, जन्म, मृत्यु, जरा, दुःख, रोग

के प्रति सन्तुलित दृष्टिकोण, निर्भयता, स्वच्छता, दानशीलता, शास्त्रवादिता, तपस्या, सरल व्यवहारशीलता, क्रोधहीनता, त्यागपरायणता, शान्ति, कपटता का अभाव, दया, अलोलुपता, सौजन्य, सरल जीवन से प्रेम, क्षुद्र स्वभाव का दमन, वीर्य, शौर्य और दम तथा घृणा एवं प्रतिहिंसा का अभाव।

किसी कार्य को बार-बार करने से एक आदत का जन्म होता है, आदत का बीज बो देने से चरित्र का निर्माण होता है और चरित्र का बीज बो देने से भाग्य का उदय होता है। चित्त में विचारों, अनुभवों और कर्मों के संस्कार मुद्रित हो जाते हैं। व्यक्ति के मर जाने पर भी ये संस्कार जीवित और सक्रिय रहते हैं। इनके ही कारण मनुष्य बार-बार जन्म लेता है। विचार और कर्मजनित संस्कार मिलकर आदत का विकास करते हैं। आदतों के संगठन से ही चरित्र का विकास होता है। व्यक्ति ही अपने इन विचारों और आदतों का विधाता है। आज जिस अवस्था में व्यक्ति को देखते हो, वह भूतकाल का ही परिणाम है। यह आदत का उत्तररूप है। प्रत्येक व्यक्ति अपने विचारों और कार्यों पर नियन्त्रण स्थापित कर, मनोनुकूल आदतों का निर्माण कर सकता है।

दुश्चरित्र व्यक्ति सदा के लिए दुश्चरित्र हो गया हो, यह तर्क उचित नहीं है। उसे सन्तों के सम्पर्क में रहने का अवसर और सुविधा दो। उसके जीवन में परिवर्तन खिल उठेगा, उसमें दिव्य गुण जाग उठेंगे। डाकू रत्नाकर ही वाल्मीकि बने। जगाई और मधाई, जिन्होंने नित्यानन्द जी पर पत्थर मारे थे, महान् भक्त बन गये। इन व्यक्तियों के मानसिक आदर्शों और विचारों में समूल परिवर्तन हो गया था। इनकी आदतें सर्वथा बदल गयी थीं। अपने बुरे चरित्र और विचारों को बदलने की शक्ति प्रत्येक व्यक्ति में विद्यमान है। यदि बुरे विचारों और आदतों के बदले अच्छे विचारों और आदतों का अभ्यास किया जाय तो व्यक्ति को दिव्य गुणों से परिपूर्ण किया जा सकता है। दुश्चरित्र सच्चरित्र ही क्या, सन्त भी बन सकता है।

चरित्र-निर्माण का मतलब होता है, आदतों का निर्माण। चरित्र को बदलने से आदतें भी बदल जाती हैं। चरित्र प्रमुख है, आदत तो गौण है। संकल्प, रुचि, ध्यान और श्रद्धा के द्वारा चरित्र का निर्माण किया जा सकता है। नवीन, स्वस्थ, बलशाली और धर्मानुकूल आदतें पुरानी, अस्वस्थ, अपवित्र, निर्बल और अधार्मिक आदतों को स्थानान्तरित कर देती हैं। योग के अभ्यास का लक्ष्य यही है कि मनुष्य अपनी पुरानी, क्षुद्र आदतों को त्याग कर नवीन, सुन्दर आदतों को ग्रहण कर ले। त्याग की भावना से किया गया कर्मयोग का अभ्यास

भी मन में सुन्दर आदतों का प्रतिष्ठापन करता है। भक्ति, उपासना और विचार के अभ्यास से भी पुरानी आदतों को हटाया जा सकता है।

व्यक्ति की आदतों, गुणों और चरित्र को प्रतिपक्ष-भावना की विधि से भी बदला जा सकता है। प्रतिपक्ष-भावना विरोधी गुणों की भावना को कहते हैं। क्रोध को जीतने के लिए उसके विरोधी स्वभाव – शान्ति और क्षमाशीलता को विकसित करना ही क्रोध की प्रतिपक्षीय भावना है। असत्य को जीतने के लिए प्रतिपक्षीय भावना है सत्यवादिता। साहस और सत्य की भावना विकसित करो। साहसी और सत्यवादी बन जाओगे तो भय और असत्यवादिता का निराकरण किया जा सकेगा। ब्रह्मचर्य और सन्तोष का विचार करोगे तो काम-वासना और लोभ का पराभव किया जा सकेगा। प्रतिपक्ष भावना द्वारा अपनी दुश्चरित्रता का दमन अवश्य करना चाहिए, यह वैज्ञानिक विधान है।

प्रायः कुछ लोगों का, जिन्हें योग की विधियों से अपनी आदतों और चरित्र को सुधारना नहीं आता, विचार रहता है कि उनका चरित्र आजन्म तो क्या, जन्म-जन्मान्तरों तक वैसा ही रहेगा। यह विचार गलत है। चरित्र के लिए तो व्यक्ति के विचार, आदर्श और मानसिक प्रेरणाएँ ही उत्तरदायी हैं। यदि विचारों, आदर्शों और मानसिक प्रेरणाओं को बदल दिया जाय तो चरित्र भी बदला जा सकता है।

मान लो कि तुम साहस का विकास करना चाहते हो। पहले यह अच्छी तरह जान लो कि चित्त तुम्हारा आज्ञाकारी कर्मचारी है और तुम्हें उससे काम निकालने की विधि आनी चाहिए। यह तुममें नया चरित्र, नवीन आदर्श, नवीन मानसिक प्रेरणाएँ और नवीन आदतें भर देगा। तुममें साहस का विकास करने की तीव्र इच्छा भी होनी चाहिए। जहाँ चाह, वहाँ राह। यदि साहस के लिए चाह न हुई तो साहस का उपार्जन भी नहीं हो सकेगा। इसलिए साहस का उपार्जन करने के लिए सबसे पहले तीव्र इच्छा होनी चाहिए। जब तीव्र इच्छा जाग्रत हो जाती है तब संकल्प का विकास करना चाहिए। जिस प्रकार कुत्ता अपने स्वामी का अनुसरण करता है, उसी प्रकार संकल्प भी इच्छा का अनुसरण किया करता है।

ऐसा अनुभव करो जैसे तुमने साहस का उपार्जन कर ही लिया है। अपनी पूर्ण शक्ति को केन्द्रित कर मन-ही-मन सोचो, 'मुझे साहस की प्राप्ति हो रही है।' बार-बार यही अनुभव करते रहो। जब-जब साहस का ध्यान या विचार करते हो, तब-तब यह निश्चय कर लो कि प्रतिक्षण साहस की मात्रा अधिक

होती जा रही है। अपनी कल्पना-शक्ति से भी काम लो। कल्पना करो कि तुम्हें इस सद्गुण की प्राप्ति हो गयी है और तुम इसे अपने दैनिक जीवन में अमुक-अमुक तरीकों से प्रयुक्त करने जा रहे हो। बार-बार सोचते रहो कि साहस से किन-किन महान् गुणों की प्राप्ति होती है, व्यक्तिगत जीवन में क्या-क्या लाभ होते हैं। अभ्यास में लगे रहो। धीरे-धीरे यह सद्गुण विकसित होता जायेगा। शान्ति से विकास की प्रतीक्षा करते रहो, हताश मत होओ।

किसी भी सद्गुण का उपार्जन करने के लिए कुछ-न-कुछ समय अवश्य लग जाता है। व्यक्ति में कायरता तथा भय जैसे पुराने संस्कारों का समुदाय प्रबलता से विरोध करता रहता है, उसके निवारण में कुछ-न-कुछ देर तो लगेगी ही। अन्दर-ही-अन्दर पुराने क्षुद्र तथा नये महान् संस्कारों के बीच सतत् युद्ध हो रहा है। यदि डटकर विरोध करते रहोगे तो अन्त में मैदान नये संस्कारों के हाथ लगेगा। सत् से असत् पर विजय पायी जाती है। अपने मन में दृढ़ निश्चय कर लो कि तुम्हें शीघ्र ही साहस की प्राप्ति हो जायेगी। इस ओर अपना पूरा-पूरा ध्यान दो। कुछ ही काल में तुम्हें अवश्य सफलता मिलेगी। इसी प्रकार तुम अन्य सद्गुणों का उपार्जन करके, एक परिमार्जित चरित्र का निर्माण कर सकते हो। तुम जिस भी गुण का विकास करना चाहते हो, उसका मानसिक चित्र अपने मन में स्पष्ट उतार लो और तब उस पर अपना ध्यान केन्द्रित करो। इसी मानसिक चित्र के चारों ओर शक्ति का केन्द्रीकरण होगा।

यदि तुम्हें चरित्र-निर्माण में कठिनाई मालूम होती है तो सन्तों और महात्माओं के सम्पर्क में रहो। सन्त-महात्माओं के सम्पर्क में रहने से उनकी आध्यात्मिक विचारधारा तुम्हारे जीवन में अद्भुत परिवर्तन का श्रीगणेश करेगी। यह कभी न कहो कि आजकल अच्छे महात्मा कहीं भी देखने को नहीं मिलते। ऐसा सोचना बड़ी भारी भूल होगी। मेरी बात श्रद्धा और रुचि के साथ सुनो। मैं आज भी तुम्हें अनेकों सन्त-महात्माओं के दर्शन करा सकता हूँ, किन्तु तुम पहले नम्र और सत्य-परायण तो बन जाओ।

अपने चरित्र का निर्माण करो। चरित्र-निर्माण से ही जीवन में सच्ची सफलता मिल सकती है। चरित्र-निर्माण साधुता का विभूषण है। प्रतिदिन अपनी बुरी आदतों को हटाने का प्रयत्न करते रहो। प्रतिदिन सत्कर्म करने का अभ्यास करो। यदि तुमने अपने जीवन को ऐसा बना लिया तो फिर कहना ही क्या, तुमने जो कुछ पाना था, सो पा लिया। सच्चरित्रता मनुष्य-जीवन में प्राण समान है, उसके बिना तो मनुष्य मृतक के समान है।

योग से स्मृति-लाभ

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

स्मरणशक्ति का क्षीण हो जाना यह सिद्ध करता है कि मस्तिष्क में कहीं पर सिकुड़न आ रही है। जब मस्तिष्क सिकुड़ता है, तब यह भी उसी प्रकार से होता है जिस प्रकार बुढ़ापे में माँसपेशियाँ, पेट, इत्यादि सिकुड़ने लगते हैं। जब मस्तिष्क की मांसपेशियाँ सिकुड़ती हैं तब स्मरणशक्ति धीरे-धीरे कमजोर होने लगती है। यह एक कारण है।

दूसरा कारण क्या है? बच्चों में सात-आठ साल की अवस्था के बाद उनकी पीनियल ग्रन्थि धीरे-धीरे नष्ट होने लगती है। उसका आकार लहसुन की तरह होता है, और वह सिर के पीछे बिल्कुल छोटी-सी है। जब तक वह ग्रंथि क्रियाशील है तब तक बच्चों की याददाश्त तीक्ष्ण होती है, वह बिल्कुल कैमरे की तरह स्पष्ट रूप से कार्य करती है। वे जो भी देखते हैं, फट से उसमें अटक जाता है। उसे समझें या नहीं समझें, यह बात दूसरी है। बच्चे नहीं भी समझेंगे तो भी उनके ऊपर वह प्रतिबिम्ब आ ही जायेगा। उसके बाद 19 साल की अवस्था तक उनकी स्मरण शक्ति ठीक तरह से काम करती है। 18 से 20 साल की अवस्था के बीच हमारे शरीर में एक बहुत शक्तिशाली जहरीला हॉर्मोन तत्त्व उत्पन्न होता है। वह हॉर्मोन लड़कों में ज्यादा पैदा होता है और लड़कियों में नहीं के बराबर होता है। वह जहरीला तत्त्व सीधे लड़कों के अण्डकोष में जाकर उसको प्रभावित करता है और प्रभावित करने के बाद वहीं से मस्तिष्क की तरफ एक करेंट, एक उत्तेजना वापस भेजता है, जिसकी वजह से स्मरणशक्ति कमजोर होती है।

योगशास्त्र में स्मरणशक्ति को तीव्र करने के जो साधन हैं, उनमें

सबसे उत्तम साधन माने गये हैं – शीर्षासन, प्राणायाम तथा अन्तर्मौन। इनमें से शीर्षासन तो अभी बतलाऊँगा नहीं, इसके बारे में जानकारी रखनी चाहिए। प्राणायाम के बारे में भी ज्यादा नहीं बतायेंगे क्योंकि यह एक लम्बा विषय है। अन्तर्मौन योग की एक छोटी-सी क्रिया है, जो बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसके दो भाग होते हैं। आराम कुर्सी पर बैठो, आसन पर बैठो या लेट जाओ। किसी भी अवस्था में शरीर स्थिर करके आँखें बन्द कर लो, पर मन को एकाग्र मत करो। तब क्या करना? अपने मन को देखो। मन में क्या देखेंगे? मन में जो विचार आते हैं, उनको देखो। विचारों को रोकना नहीं। अच्छे विचारों को भी नहीं रोकना, बुरे विचारों को भी नहीं रोकना। कोई पश्चात्ताप की भावना, कोई अपराध या ग्लानि के भाव भी नहीं होने चाहिए। कभी-कभी बढ़िया विचार आता है, कभी-कभी घटिया विचार आता है, कभी फालतू विचार आता है। कभी-कभी सब फालतू विचार ही आते हैं। आने दो, स्वतंत्रतापूर्वक आने दो। तुम उन्हें केवल देखते रहो। द्रष्टा बनो। उनको मान्यता मत दो, उनको महत्त्व मत दो। इस प्रकार विचारों को देखते जाने से क्या होता है कि तुम अलग हो जाते हो, विचार अलग हो जाते हैं।

यह अवस्था जब आ जाती है तब क्या करना? अपने लिए करीब 50 प्रतीक चुन लेना और उनको याद कर लेना। एकदम मुखाग्र याद कर लेना। अपने मन में उन प्रतीकों को बोलते जाओ और उनको देखते जाओ। जैसे, गुलाब का पत्ता, बहती हुई नदी, नदी का किनारा, धधकती हुई चिता, जंगल, ऊँचे पहाड़, उमड़ती हुई रेत, नीला आसमान, पूर्ण चन्द्रमा, उगता हुआ सूरज, आदि। ऐसे अनेक प्रकार के प्रतीकों को याद कर लो। वह बिल्कुल कण्ठस्थ होना चाहिए और उनको देखते जाओ। देखना कैसे चाहिए? जब तक वह प्रतीक एकदम वास्तविक न हो जाये तब तक उसको देखते रहना चाहिए। उसको कहते हैं, 'आन्तरिक दर्शन'। इस तरह से कुछ निश्चित प्रतीक अपने सामने बना लो, याद कर लो और उनको अपने मानस पटल पर काल्पनिक रूप से देखते जाओ, मन में देखते जाओ।

जब तुम अपने मन में सोचे गये प्रतीक को अन्दर में बिल्कुल स्पष्ट देखने लगते हो, तब उसका मतलब हुआ कि तुम्हारी स्मरणशक्ति तेज हो रही है। इसका परीक्षण इस प्रकार है, जैसे मैं कहता हूँ – नीली रेखा। तुम आँख बन्द करके सोच सकते हो कि यह नीली रेखा क्या है, क्योंकि नीली रेखा को कई बार देखा है। अगर तुम मन में नीली रेखा नहीं देख सकते हो, तो समझना कि तुम्हारी स्मरणशक्ति तेज नहीं है। जिसकी स्मरणशक्ति तेज होगी, आँख बंद करके उसे नीली रेखा दिखलायी देगी। सोचना और देखना, ये दो भिन्न चीजें हैं। इसे करके समझना होगा।

भगवान् बुद्ध इसके बारे में एक उपदेश देते हैं। कभी कोई उनके पास आता और उनसे कहता कि भगवन्! मेरी बुद्धि बहुत मंद हो गयी है, मेरी स्मृति बहुत मंद हो गयी है, मैं क्या करूँ? तो भगवान् बुद्ध पूछते थे कि कभी तुम्हारे पैर में कोई काँटा चुभा क्या? लोग बोलते, 'हाँ, चुभा तो था।' 'कैसा लगा तुमको उस वक्त?' 'बड़ा दर्द हुआ।' 'तुम दर्द को अभी अनुभव कर सकते हो क्या?' 'महाराज, अनुभव तो नहीं कर सकता हूँ, मगर उसकी जानकारी मेरे को है।' वे कहते, 'कमरे में जाओ, बैठो, तुम उस दर्द का तीव्र अनुभव करो।' उसको कमरे में भेज देते थे और बोल देते थे कि जब तक उसका अनुभव नहीं हो, तब तक तुम वहीं बैठे रहो।

अब काँटा तो मेरे को लगा है और मेरे को मालूम भी है कि मेरे को दर्द हुआ, और मेरे को यह भी मालूम है कि मेरे को भयंकर दर्द हुआ, मगर वास्तव में जिस दर्द का अनुभव, जिस वेदना की अनुभूति उस वक्त हुई है, उसको अभी मैं ला नहीं पाता हूँ, क्यों? इसलिए कि मेरा मन और मस्तिष्क सीमित है और मेरी स्मृति धुँधली है। अगर तुम भूतकाल की किसी वस्तु को वर्तमान में पूर्ववत् ले आते हो तो इसका मतलब हुआ कि तुम्हारी स्मरणशक्ति तेज है। जैसे, अगर तुमसे मैं पूछूँ, 'तुमने रसगुल्ला खाया है क्या? खाया तो कैसा लगा?' 'बहुत अच्छा लगा।' 'उसका स्वाद कैसा था?' 'बहुत अच्छा था।' 'तो उसके स्वाद को पुनः अनुभव कर सकते हो क्या, मानसिक या भावनात्मक स्तर पर?' 'नहीं, वह तो नहीं कर सकते।' जैसे ही बैठकर रसगुल्ले का ध्यान करते-करते रसगुल्ले का स्वाद तुम्हारे मुँह में आयेगा, समझ लेना कि तुम्हारी स्मरणशक्ति जाग्रत हो गयी। इसी प्रकार का सर्वशक्तिशाली और सूक्ष्म मानसिक अभ्यास है, जो राजयोग के पाँचवें चरण में बतलाया जाता है। इस अभ्यास को हम लोग 'अन्तर्मौन' कहते हैं। इसे तुम लोग जरूर सीखना।

बुद्धि, भावना एवं कर्म का समन्वय

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

स्वामी शिवानन्द जी की मूल शिक्षा यही थी कि योग के माध्यम से मनुष्य की बुद्धि, भावना और कर्म का समन्वय होना चाहिए, और यही उनके सभी शिष्यों का लक्ष्य बन गया। स्वामी शिवानन्द जी के विभिन्न शिष्य जहाँ भी गये, वहाँ योग भी साथ ले गये और अपनी समझ एवं साधना के अनुसार उसका प्रचार करने लगे। योग मन, बुद्धि और भावनाओं के सृजनात्मक आयामों को विकसित करने का तरीका बन गया, जिससे जीवन की एक उच्च, प्रबुद्ध अवस्था तक पहुँचा जा सकता था। स्वामी शिवानन्द जी ने इसी विचारधारा

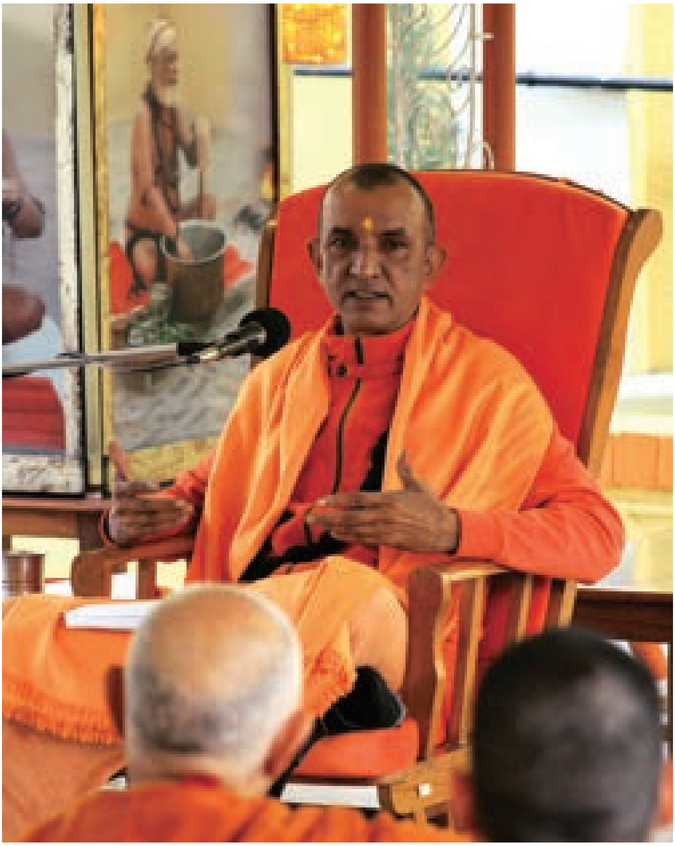

को अधिक व्यावहारिक तरीके से आगे बढ़ाया। आज बुद्धि, भावना एवं कर्म की क्षमताओं को जागृत और समन्वित करने की परम आवश्यकता है, पर यह तभी हो सकता है जब स्वयं को विकसित एवं उन्मुक्त करने की सच्ची अभिलाषा और रुझान हो। जब तक यह नहीं होता तब तक योग मात्र बौद्धिक ज्ञान रहता है, वह अनुभव नहीं बनता।

हमें वर्तमान समाज पर, वर्तमान पीढ़ी की शिक्षा पर गौर करना चाहिये। बीस-पचीस साल के युवा सामाजिक जीवन की मुख्य धारा में प्रवेश कर रहे हैं। उन्होंने ऐसा क्या पाया या सीखा है जो उन्हें समाज में कुशलता से ढलने में मदद करता है? क्या विज्ञान और तकनीकी मनुष्य के विकास में सहायक है या यह सृजनात्मकता को सीमित करती है?

मैं अपनी यात्राओं में जब कभी समुद्र-तट पर जाता हूँ तो लहरों और सूर्यास्त के दृश्य का आनन्द लेता हूँ, लेकिन जब अपने आस-पास नजर घुमाता हूँ तो देखता हूँ कि युवा लोग अपने मोबाईल से चिपके हैं और फेसबुक पर अपने मित्रों को संदेश भेज रहे हैं। शायद ही कोई सूर्यास्त के मनोरम दृश्य को देखता है। कभी-कभी युवा लोग हमसे कहते हैं, 'आइये स्वामीजी, रात के समय शहर देखने चलते हैं।' एक गाड़ी में छः-सात लोग घुस जाते हैं, लेकिन खिड़की के बाहर नजारों को सिर्फ मैं ही देखते रहता हूँ, बाकी सब अपने मोबाईल पर लगे होते हैं। हम भोजन के लिए कहीं जाते हैं तो मैं वहाँ खाने का इंतजार करता हूँ और बाकी सब फेसबुक पर अपने दोस्तों को संदेश भेज रहे होते हैं। इस सब के बावजूद लोगों के बीच वास्तविक संवाद और बात-चीत तो होती ही नहीं।

ये तेजस्वी नवयुवक हैं जिनमें काफी प्रतिभा और ऊर्जा है, पर उनके संस्कार कुछ ऐसे हैं कि वे गम्भीर, निष्ठावान् और अपने लक्ष्य के प्रति दृढ़संकल्प नहीं हैं। जब ऐसे लोग संन्यास के लिये आते हैं तो उनके जीवन में इन तीन गुणों की कमी स्पष्ट दिखलाई देती है।

आधुनिक समाज की विक्षिप्त मानसिकता

आज की दुनिया में जरा कम्प्यूटर ऑपरेटर्स और उन कम्पनियों पर गौर करें जहाँ कम्प्यूटर इस्तेमाल किए जाते हैं। ऐसे लोगों से जब मैं कुछ सवाल करता हूँ कि 'आपकी कम्पनी में आजकल क्या चल रहा है? आपके कार्यक्षेत्र की क्या हालत है?' तो मुझे कुछ इस तरह का जवाब मिलता है, 'स्वामीजी,

पिछले तीन-चार सालों से हमारे कार्यक्षेत्र में जो लोग आ रहे हैं उनमें जमीन-आसमान का परिवर्तन आया है। हमें अपने दफ्तर से हर प्रकार के सोशियल मीडिया को हटाना पड़ता है। किसी भी कम्प्यूटर पर यूट्यूब, फेसबुक या जी-मेल नहीं है। आज हर कोई यह अपेक्षा रखता है कि वह दफ्तर का इस्तेमाल अपने निजी काम के लिये करेगा, असली काम-काज के लिए नहीं।' यह आज के लोगों की प्रवृत्ति हो गई है।

उन लोगों की कम्प्यूटर स्क्रीन पर दफ्तर का काम खुला होगा, पर चुपके से वे कुछ और करते रहेंगे और उसे किसी गुप्त फोल्डर में छुपाकर रखेंगे। यह हर व्यक्ति के मन की स्थिति और निष्ठाहीनता को दर्शाता है। हर कोई अपने लिए व्यक्तिगत और गुप्त लक्ष्य बना लेता है। यह तुम्हारे स्वभाव, तुम्हारी एक आदत को दर्शाता है। हर चीज में चालाकी और छल-प्रपंच है। वफादारी, समझ और आपसी सम्बन्ध का पूरी तरह अभाव है। बाहर से स्क्रीन पर दफ्तर का काम-काज होता प्रतीत होता है, पर चुपके से अलग-अलग चीजों का डाउनलोड होते रहता है। इस तरह के प्रपंच चलते रहते हैं जो पीठ-पीछे संस्था को ही हानि पहुँचाते हैं।

यह सब आज के लोगों की विक्षिप्त मानसिकता और विचारधारा को दर्शाता है। तुम्हारी निजी जिन्दगी में भी ऐसे कई गुप्त फोल्डर हैं जिन तक सिर्फ तुम पहुँच सकते हो। जब कम्प्यूटर नहीं होते थे, तब तुम्हें इन्हें अपने मन में छुपाना पड़ता था और तब यह दमन कहलाता था, जो एक प्रकार का मानसिक रोग है। तुम्हें अपनी सभी कुण्ठाओं और रुकावटों को हटाकर निष्कपट और निश्छल बनना होगा। जब तक तुम्हारे मन में एक भी गुप्त फाईल होगी तब तक तुम्हारा जीवन में समस्या बनी रहेगी।

एक तरफ तुम आध्यात्मिक सजगता विकसित करना चाहते हो, पर दूसरी तरफ तुम उन चीजों को पकड़े रहना चाहते हो जो तुम्हारी एक अलग पहचान बनाए रखती हैं। तुम छोटी-छोटी चीजों को छोड़ नहीं पाते, 'मैं अपना पासवर्ड किसी को नहीं दे सकता। मैं यह नहीं दे सकता, वह नहीं दे सकता।' जब तुम इन गुप्त फोल्डर्स से चिपके रहते हो, जो तुम्हारे 'अहं-भाव' को दर्शाते हैं, तब तुम्हारी गम्भीरता, निष्ठा और प्रतिबद्धता कहाँ है? तुम्हारे कर्म तुम्हारे लक्ष्यों के ठीक विपरीत होते हैं। यह ढोंग नहीं तो और क्या है? होनहार लोग भी अपनी महत्त्वाकांक्षाओं के जाल में फँस जाते हैं और यह उनकी प्रगति को बाधित कर देता है।

यहीं पर अपनी बुद्धि, भावना और कर्म की प्रतिभाओं का समन्वय एक अहम भूमिका निभाता है। तुम्हें इन्हें गम्भीरता, समर्पण और निष्ठा के साथ संयोजित करना होगा। नहीं तो फिर किस तरह का सम्बन्ध जुड़ सकता है? निष्ठा और वफादारी के बिना एक संन्यासी का भी गुरु से कोई सम्बन्ध नहीं। ऐसे लोग, जिनकी गुप्त फाइलें और फोल्डर हैं, वे अपने गुरु से भी बात छिपाते हैं, पर अपने दोस्तों के प्रति एकदम वफादार होते हैं जो इन कार्यों में उकसाकर मदद करते हैं। यही आज की वास्तविकता है और इसी की वजह से परिवार, संस्था और समाज में दरार पड़ती है। इसी दरार से फिर असंतुलन, विवाद, असामंजस्य, अलगाव, घबराहट, व्याकुलता, चिंता और दूरियाँ पैदा होती हैं। कई लोग दफ्तरी काम-काज के बोझ की शिकायत करते हैं, पर असल में यही जीवन का बोझ और दबाव है जिसका तुम्हें सामना करना होगा। जीवन की ये परिस्थितियाँ तभी बदल सकती हैं जब तुम्हारे अन्दर बेहतर बनने की सच्ची इच्छा जागृत होगी।

योग का वास्तविक लक्ष्य – बुद्धि, भावना एवं कर्म का समन्वय

योग को उसके वास्तविक स्वरूप में जीना ही स्वामी शिवानन्द जी और स्वामी सत्यानन्द जी का हमेशा प्रयोजन रहा। योग के संदर्भ में स्वामी शिवानन्द जी ने कहा है कि इसके माध्यम से मनुष्य को अपनी बुद्धि, भावना और कर्म की क्षमताओं का पोषण करना है। उनका यह सिद्धान्त योग के हर आयाम और अंग का समावेश करता है।

मनुष्य के व्यक्तित्व और स्वभाव की विभिन्न जरूरतें होती हैं। तुम अपने मन की सनक को हमेशा पूरा नहीं कर सकते। जिस तरह किसी जंगली पशु को वश में कर उस पर लगाम कसी जाती है, उसी तरह आन्तरिक संतुलन, शान्ति और सृजनात्मकता को प्राप्त करने के लिए जीवन के किसी मोड़ पर तुम्हें अपनी बेलगाम महत्त्वाकांक्षाओं और अभिलाषाओं को काबू में करना होगा। जीवन को सही मायने में समझने और सराहने के लिये तुम्हें जीवन के *सुन्दरम्, शिवम्* और *सत्यम्* गुणों से जुड़ना होगा। सत्यम् का तात्पर्य सृष्टि की शाश्वत और अक्षर सत्ता से है, शिवम् का सम्बन्ध जीवन के शुभ और कल्याणकारी तत्त्वों से है और सुन्दरम् जीवन के सौन्दर्य को दर्शाता है। स्वामी शिवानन्द जी ने यौगिक विधियों को एक ऐसे माध्यम के रूप में देखा जो बुद्धि, भावना एवं कर्म की प्रतिभाओं को जागृत और समन्वित कर सकता है, जो मन की

एक ऐसी अवस्था ला सकता है जहाँ तुम अपने अहंकार, महत्त्वाकांक्षाओं और इन्द्रिय-संवेदनाओं की बजाय अपनी आत्मिक शुद्धता से जुड़े रहते हो।

अहंकार, इच्छाएँ और इन्द्रियाँ – ये तीनों हर मनुष्य के जीवन में समस्याओं के स्रोत हैं। हर एक के जीवन में ये महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। साधना का प्रयोजन अपनी इन्द्रियों को संतुलित करना और अपनी इच्छाओं को जानना-समझना है। उनकी व्यावहारिकता और वास्तविकता को जानकर फिर अहंकार के सकारात्मक पक्ष का उपयोग आत्म-साक्षात्कार के लिये करना है।

क्या तुम केवल एक इच्छा हो? तुम कहते हो, 'मैं आत्मा हूँ,' फिर भी तुम्हारा बर्त्ताव मात्र एक इच्छा के समान होता है। उसमें आत्मा का कोई गुण नहीं झलकता। कोई समझ या तर्क नहीं, सिर्फ इच्छा बलवती होती है। अपने जीवन में तुम केवल अपनी इच्छाओं, अहंकार और इन्द्रियों के इशारों पर नाचते हो। तुम इसी तरह दूसरे लोगों से, अपने आस-पास के वातावरण और

दुनिया से मेल-मिलाप करते हो। अध्यात्म केवल एक दर्शन और विचारधारा है जिसे तुम सीखना चाहते हो। श्री स्वामीजी हमेशा कहा करते थे, 'तुमने घृणा कहाँ से सीखी? तुमने ईर्ष्या और क्रोध कहाँ से सीखा?' ये तुम्हारे जीवन की स्वाभाविक अभिव्यक्तियाँ हैं। जब तुम नकारात्मकता से जुड़े होते हो तब यही नकारात्मक अभिव्यक्तियाँ स्वाभाविक बन जाती हैं।

तुम अपने जीवन में दया, करुणा और सद्भावना जैसे गुण अपनाना चाहते हो। ये भी जीवन की स्वाभाविक अभिव्यक्तियाँ बन जाने चाहिये। जब तुम सकारात्मकता से जुड़े होते हो, तब सकारात्मक कर्म भी सहज होने चाहिये, पर ऐसा होता नहीं। श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि अच्छा बनने के बारे में सोचना बड़ा आसान है, पर वास्तव में अच्छा बनना मुश्किल है। तुम स्वयं को भ्रमित करके यह मान सकते हो कि तुम अच्छे हो, पर तुम्हारा अच्छा होने का मापदण्ड क्या है? जीवन की सकारात्मक, सृजनात्मक शक्तियों से जुड़े बिना कोई अच्छा नहीं बन सकता।

स्वामी शिवानन्द जी कहते हैं कि जिस प्रकार तुम सब्जी को स्वादिष्ट बनाते हो, उसी प्रकार योग को भी बनाना होगा। तुम एक लीटर पानी में एक किलो नमक, एक-एक किलो आलू, टमाटर, बैंगन और मसाले डालकर स्वादिष्ट सब्जी नहीं बना सकते। सभी चीजें सही अनुपात में डालनी होंगी – एक लीटर पानी में चुटकी भर नमक, चम्मच भर मसाले और सही मात्रा में सब्जियाँ। जैसे हर चीज के लिये एक अनुपात होता है, वैसे ही योग के लिये भी है। तुम एक घण्टे तक आसन, एक घण्टे ध्यान, एक घण्टे योग निद्रा और एक घण्टे प्राणायाम का अभ्यास नहीं कर सकते।

योग का अभ्यास भी चुटकी से लेकर किलो तक, सही अनुपात में करना चाहिये। अगर तुम एक घण्टे तक आसन का अभ्यास करते हो, तो पाँच मिनट शान्ति और सौम्यता का अभ्यास भी करो। अगर तुम प्राणायाम का अभ्यास रोज बीस मिनट के लिये करते हो तो सत्य के यम का अभ्यास दस मिनट के लिये करो। अगर एक घण्टे तक ध्यान करते हो, तो उससे मिली शान्ति को अपने दैनिक जीवन में कम-से-कम पाँच मिनट के लिये लाओ। कोई चीज चुटकीभर, कुछ चम्मचभर, कुछ बाल्टीभर हो, सब चीजों का अनुपात सही हो। तुम देखोगे कि कुछ ही समय में सब्जी स्वादिष्ट और आनन्ददायी लगने लगेगी। जो लोग इस अवस्था तक पहुँच जाते हैं वे योग को हर समय बिना किसी विशेष प्रयास के सहजता से जीते हैं।

अनाहत योग स्वास्थ्य एवं शिक्षा न्यास – न्यूज़ीलैंड

2023 की मुख्य उपलब्धियाँ

- अपने समुदाय के ऐसे लोगों तक पहुँचने के लिए अधिक ऑनलाइन सामग्री उपलब्ध करायी गयी जो अपने जीवन में स्वास्थ्य, सुख-शान्ति और सामंजस्य का अभाव अनुभव कर रहे हैं।
- मानसिक स्वास्थ्य और संतुलन तथा भोजन उगाने और पकाने जैसे व्यावहारिक कौशलों को प्रोत्साहित करने के लिए और अधिक कार्यक्रम
- 'योग न्यूज़ीलैंड' के साथ ध्यान-प्राणायाम शिक्षक प्रशिक्षण का पंजीकरण
- अनेक ऑनलाइन एवं व्यक्तिगत कार्यक्रमों एवं सम्मेलनों में भागीदारी
- पोस्ट ट्रोमैटिक स्ट्रेस डिसोर्डर से पीड़ित महिलाओं के लिए सामुदायिक कार्यक्रम में भागीदारी
- हमारा दातव्य न्यास कई समर्पित सक्रिय सदस्यों तथा समर्थकों और शुभचिंतकों की टीम के साथ धीरे-धीरे मजबूत होते जा रहा है।
- हाई स्कूल के विद्यार्थियों के लिए योग प्रशिक्षण कार्यक्रम
- 'ते व्हारे महाना' मानसिक स्वास्थ्य समूह के लिए अनाहत केन्द्र में योग कक्षायें

पिछले कुछ वर्षों से सभी कार्यक्रमों में मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दिया गया है क्योंकि बहुत-से लोग कोविड महामारी के शिकार हुए और साथ ही लॉकडाउन के दौरान एकांतवास, मास्क पहनने के प्रतिकूल स्वास्थ्य प्रभावों तथा समाज से हुए सम्बन्ध विच्छेद के मनोवैज्ञानिक परिणामों से बहुत पीड़ित हैं। बहुत-से लोगों ने अपनी आजीविका खो दी है। मौजूदा वित्तीय संकट से लोगों के जीवन में चुनौतियाँ जारी हैं।

केन्द्र में कार्यक्रम

फरवरी 2023, योग निद्रा तथा प्राणायम शिक्षक प्रशिक्षण – यह एक 16-दिवसीय शिक्षक विकास कार्यक्रम था जो विश्रान्ति एवं स्वास्थ्य पर केन्द्रित

था तथा योग शिक्षकों, स्वास्थ्य एवं शिक्षा क्षेत्र में कार्यरत लोगों और योग साधकों के लिए बनाया गया था।

अप्रैल 2023, ध्यान और प्राणायाम शिक्षक प्रशिक्षण – यह 16-दिवसीय शिक्षक विकास कार्यक्रम प्राणायम एवं ध्यान की विधियों द्वारा स्वास्थ्य-सुधार पर केन्द्रित था।

इन दोनों सत्रों के बाद 3 महीने का ऑनलाइन प्रशिक्षण और साधना कार्यक्रम दिया गया। कोविड महामारी के बाद मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य समस्याओं में वृद्धि के कारण ये सत्र न्यूज़ीलैंड के लोगों के लिए बहुत लाभदायक साबित हुए हैं। इनसे प्रतिभागियों को मौलिक अभ्यास सिखाने का प्रशिक्षण मिला ताकि वे निम्नांकित क्षेत्रों में अधिकाधिक लोगों तक लाभ पहुँचा सकें –

- स्वास्थ्य देखभाल
- मनोवैज्ञानिक परामर्श
- रजोनिवृत्ति काल में महिलाएँ
- किंडरगार्टन बच्चे
- ऑस्ट्रेलिया में एक आदिवासी बस्ती
- शरणार्थी समुदाय में
- दैहिक आघात चिकित्सा
- माओरी समुदाय में
- मानसिक एवं शारीरिक तनाव से ग्रस्त लोगों के लिए

पर्यावरण संबंधी गतिविधियाँ – इन गतिविधियों में आसपास के सुंदर प्राकृतिक वातावरण की रक्षा करना, हानिकारक खरपतवारों को दूर रखना, जैविक उद्यान विकसित करना, नया मशरूम क्षेत्र शुरू करना, खाद बनाना और पेड़ लगाना शामिल हैं।

शास्त्र ही प्रमाण हैं

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

गीता में श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं, 'जो पुरुष शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है, वह न सिद्धि को प्राप्त होता है, न सुख को और न ही परमगति को। इसलिए तुम्हारे लिए इस कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य की व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण हैं। ऐसा जानकर तुम शास्त्रविधि से नियत कर्म ही करने योग्य हो।'

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्॥16.23॥
तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि॥16.24॥

धर्म के विषय में बुद्धि को प्रामाणिक नहीं माना जा सकता। अविकसित मनुष्य अपने लिए उचित-अनुचित का सही फैसला नहीं कर सकते। धर्म के विषय में केवल शास्त्र ही प्रमाण हैं। शास्त्रों के अतिरिक्त ज्ञान के किसी अन्य स्रोत द्वारा आप धर्म की बारीकियों के बारे में नहीं जान सकते।

श्रुति एवं स्मृति

सनातन धर्म के दो प्रामाणिक स्रोत हैं – श्रुति एवं स्मृति। श्रुति का शाब्दिक अर्थ है 'जो सुना गया' तथा स्मृति का अर्थ है 'जो स्मरण रखा गया'। श्रुति उद्घाटित ज्ञान है। उपनिषद् श्रुति है। स्मृति पारम्परिक ज्ञान है।

श्रुति प्रत्यक्ष अनुभव है। महान् ऋषियों ने धर्म के शाश्वत सत्यों को सुना और उनका लिखित प्रमाण भावी पीढ़ियों के लिए छोड़ गये। इन्हीं लिखित प्रमाणों से वेदों का संकलन हुआ। अतः श्रुति प्राथमिक प्रमाण है। स्मृति उस अनुभव का अनुस्मरण है। अतएव यह एक परोक्ष प्रमाण है। स्मृतियाँ भी ऋषियों द्वारा लिखे गये ग्रन्थ ही हैं, लेकिन वे अन्तिम प्रमाण नहीं हैं। यदि किसी स्मृति में कुछ ऐसा है जो श्रुति का खण्डन करता है, तो स्मृति को अस्वीकार किया जायेगा। भगवद्गीता भी एक स्मृति है। इसी प्रकार महाभारत भी एक स्मृति है।

स्मृतियाँ हिन्दुओं की प्राचीन, पवित्र धर्म-संहिताएँ हैं जो सनातन वर्णाश्रम धर्म से सम्बन्ध रखती हैं। वे उन धार्मिक सिद्धान्तों एवं कर्मकाण्डों की सम्पूर्ति एवं व्याख्या करती हैं जिन्हें वेदों में विधियाँ कहा गया है। स्मृतियाँ वेदों के उपदेशों पर आधारित हैं। प्रामाणिकता की दृष्टि से स्मृति का स्थान श्रुति के बाद है। यह सनातन धर्म की व्याख्या एवं उसके उन नियमों को निर्धारित करती है जो हिन्दुओं के राष्ट्रीय, सामाजिक, पारिवारिक एवं व्यक्तिगत दायित्वों को व्यवस्थित करते हैं।

धर्म-शास्त्र

परिभाषा एवं परम्परानुसार तो केवल धर्म-शास्त्रों को ही स्मृति कहा जाता है, लेकिन सामान्यतया वेदों के अतिरिक्त सभी अन्य हिन्दू शास्त्रों को स्मृतियों के अन्तर्गत माना जाता है।

हिन्दू समाज को व्यवस्थित रखने के नियम समय-समय पर स्मृतियों में संहिताबद्ध किये गये। व्यक्तियों, परिवारों एवं समुदायों के दैनिक आचरण, व्यवहार एवं रीति-रिवाजों को व्यवस्थित करने के लिए स्मृतियों ने निश्चित नियम एवं कानून निर्धारित किये। समय-विशेष की परिस्थितियों के अनुसार, सभी वर्गों के लोगों को उनके कर्त्तव्यों के बारे में स्मृतियों ने विस्तार से निर्देश दिये हैं।

इन स्मृतियों से एक हिन्दू सीखता है कि उसे अपना सम्पूर्ण जीवन कैसे व्यतीत करना है। वर्णाश्रमों के कर्त्तव्य तथा सभी धर्मानुष्ठान इन शास्त्रों में स्पष्ट रूप से दिये गये हैं। एक हिन्दू के लिए उसके वर्ण एवं आश्रम के अनुसार स्मृतियों में कई विशेष कर्म निर्धारित हैं और अन्य कई वर्जित हैं। स्मृतियों का प्रयोजन मनुष्य के हृदय को शुद्ध करना है तथा उसे परिपूर्ण एवं स्वतन्त्र बनाना है।

इन स्मृतियों में समय-समय पर बदलाव आया है। स्मृतियों के समादेश एवं निषेध सामाजिक वातावरण-विशेष से सम्बन्धित हैं। हिन्दू समाज में समय के साथ-साथ जैस-जैसे ये वातावरण और परिस्थितियाँ बदलीं, वैसे-वैसे भारत के विभिन्न भागों एवं विभिन्न कालों में ऋषि-मुनियों को नई स्मृतियों या धर्म-शास्त्रों का संकलन करना पड़ा।

समय-समय पर एक महान् स्मृतिकार ने जन्म लिया। वह प्रचलित विधियों और नियमों को व्यवस्थित करता तथा पुरानी एवं अप्रासंगिक हो गयी विधियों

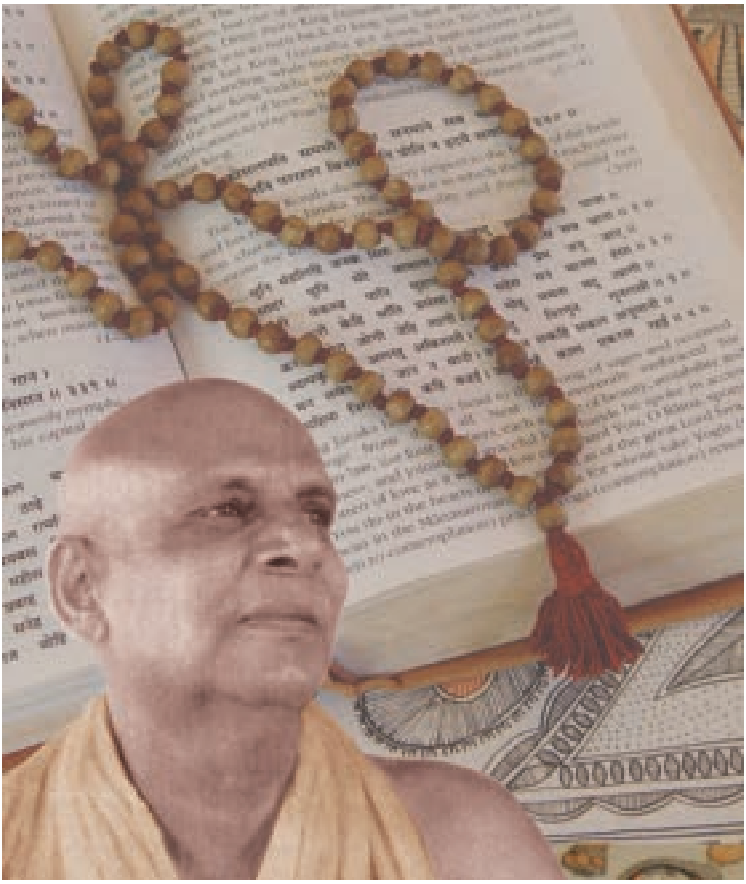

को हटा देता। समय की आवश्यकता के अनुसार वह कुछ परिवर्तन, संशोधन एवं परिवर्धन करता और इस बात का ध्यान रखता कि लोगों की जीवनशैली वेदों के उपदेशों के अनुसार हो। ऐसे स्मृतिकारों में मनु, याज्ञवल्क्य तथा पराशर सबसे अधिक विख्यात हैं। इन तीन महान् ऋषियों द्वारा निर्मित नियमों पर ही हिन्दू समाज आधारित है और इन्हीं के द्वारा संचालित है। स्मृतियों के नाम इन्हीं ऋषियों के नामों पर रखे गए हैं, यथा मनु-स्मृति, याज्ञवल्क्य-स्मृति एवं पराशर-स्मृति। मनु मानव जाति के महान् स्मृतिकार थे। वे सबसे प्राचीन भी थे। याज्ञवल्क्य-स्मृति मनु-स्मृति की सामान्य दिशा का ही अनुसरण करती है तथा महत्त्व में इसके पश्चात् आती है। मनु-स्मृति एवं याज्ञवल्क्य-स्मृति वर्तमान में सम्पूर्ण भारत में प्रामाणिक कृतियों के रूप में मानी जाती हैं। हिन्दू

कानून के सभी मामलों में मुख्यतया याज्ञवल्क्य-स्मृति का संदर्भ लिया जाता है। भारत सरकार भी इनमें से कुछ नियमों को लागू कर रही है।

मुख्य स्मृतियाँ या धर्म-शास्त्र अठारह हैं। सर्वाधिक महत्त्व वाले मनु, याज्ञवल्क्य एवं पराशर के हैं, शेष पन्द्रह विष्णु, दक्ष, अपस्तम्ब, समवर्त, व्यास, हरित, शततप, वशिष्ठ, यम, गौतम, देवल, शंख-लिखित, उशना, अत्रि तथा शौनक के हैं। मनु के नियम सत्य युग के लिए थे, याज्ञवल्क्य के त्रेता युग के लिए, शंख-लिखित के द्वापर युग हेतु तथा पराशर के वर्तमान युग के लिए हैं।

जो नियम और कानून पूर्णतया तात्कालिक सामाजिक स्थिति पर आधारित हैं, उन्हें देश और काल की परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार अवश्य बदलना चाहिए। तभी समाज की प्रगति सुनिश्चित हो पाएगी। आधुनिक युग में मनु के कुछ नियमों का पालन सम्भव नहीं। हम उनके अभिप्राय को समझ सकते हैं, परन्तु अक्षरशः उनका पालन नहीं कर सकते। समाज विकास कर रहा है। अपनी विकास-यात्रा के क्रम में यह ऐसे कई नियमों को पार कर जाता है जो इसके विकास की एक विशेष अवस्था में मान्य एवं सहायक थे। अब अनेक नवीन परिस्थितियाँ अस्तित्व में आ गई हैं जिनके बारे में पुरातन स्मृतिकारों ने चिन्तन नहीं किया था। अब लोगों से उन प्राचीन, अप्रचलित नियमों का पालन करने को कहना व्यर्थ है।

हमारा आधुनिक समाज काफी बदल चुका है। इस युग की आवश्यकताओं के अनुरूप अब एक नवीन स्मृति का आना अत्यावश्यक है। किसी अन्य ऋषि को आज एक नवीन, समयानुकूल धर्मसंहिता अवश्य प्रस्तुत करनी चाहिए। इस भावी ऋषि का हार्दिक अभिवादन!

शास्त्रविहित धर्म और अन्तरात्मा की आवाज

अब मैं अन्तरात्मा की आवाज पर कुछ शब्द कहूँगा। कुछ लोग कहते हैं, 'हम अपनी अन्तरात्मा की आवाज सुनकर ही अच्छे और बुरे, सही और गलत को जान लेते हैं। हमें शास्त्रों और धर्मग्रन्थों की आवश्यकता नहीं।' लेकिन वास्तव में कोई भी व्यक्ति केवल अन्तरात्मा की आवाज के सहारे उचित-अनुचित का निर्णय नहीं कर पायेगा। यह कुछ संकेत अवश्य दे सकती है, लेकिन कठिन एवं कष्टकर परिस्थितियों में इसकी सहायता की अपेक्षा नहीं की जा सकती। अन्तःकरण की आवाज एक अचूक मार्गदर्शक नहीं है। मनुष्य का अन्तःकरण शिक्षाओं एवं अनुभवों के साथ परिवर्तित होता है। यह

व्यक्ति की बौद्धिक अवधारणा मात्र है। व्यक्ति की अन्तरात्मा उसकी प्रवृत्तियों, झुकाव, अभिरुचियों, शिक्षा, आदतों एवं वासनाओं के अनुसार बोलती है। एक असभ्य जंगली के अन्तःकरण की भाषा किसी सभ्य शहरी की भाषा से बिल्कुल भिन्न है। एक भौतिकवादी यूरोपियन के अन्तःकरण की भाषा एक उदात्त भारतीय योगी के अन्तःकरण की भाषा से बहुत अलग है।

किसी ड्राइवर से पूछिये, 'तुम्हारा कर्त्तव्य क्या है?' वह कहेगा, 'मुझे बीस रुपये प्रतिदिन किसी भी प्रकार अवश्य कमाने हैं। मुझे दस लीटर पैट्रोल, टायर, ट्यूब और मोबिल खरीदना है। टायर बहुत मंहगे हैं। मेरी छः बेटियाँ और पाँच बेटे हैं जिनकी मुझे देखभाल करनी है।' यदि आप उससे ईश्वर, नैतिक गुणों, बन्धन-मोक्ष, भले-बुरे, धर्म-अधर्म के बारे में कुछ भी पूछें तो वह हक्का-बक्का रह जायेगा। एक ही जाति, धर्म और पंथ के दो व्यक्तियों के अन्तःकरण की आवाज में इतना अधिक अन्तर क्यों है? एक ही जिले, एक ही समुदाय के दस लोगों में हम दस प्रकार के मत क्यों पाते हैं? मनुष्य को उचित-अनुचित, भले-बुरे, धर्म-अधर्म तथा जीवन के अन्य कर्त्तव्य समझाने के लिए केवल अन्तःकरण की वाणी पर्याप्त मार्ग-निर्देशन नहीं कर सकती। शास्त्र एवं सिद्ध महापुरुष ही मनुष्य का अपने कर्त्तव्यों के कुशल निष्पादन में सही पथ-प्रदर्शन कर सकते हैं।

प्रिय मित्र, अपने कर्त्तव्यों का उचित ढंग से निर्वहन कीजिये। जहाँ भी आपको शंका हो, शास्त्रों एवं महात्माओं से परामर्श लीजिये। अधिकांश लोगों में शास्त्रों में दिये गये नैतिक सिद्धान्तों एवं नियमों के बारे में सोचने की न तो योग्यता है और न ही समय, इसलिए आप सन्त-महात्माओं से निर्देश प्राप्त कर उनका अक्षरशः पालन कीजिए। *महाजनो येन गतः स पन्थाः* – सन्त-महात्मा जिस पथ पर अग्रसर हुए हैं वही अनुकरणीय है। विकास और उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ते हुए सच्चिदानन्द आत्मा का साक्षात्कार कीजिये!

टूल्स फॉर इनर पीस – यूनाइटेड किंगडम

- लिवरपूल के आसपास चार अलग-अलग स्थानों पर शरणार्थियों के लिए नि:शुल्क साप्ताहिक कक्षाएँ आयोजित की गईं। अपने फीडबैक में कई प्रतिभागियों ने इन योग कक्षाओं के लाभ और उपयोगिता के बारे में मार्मिक बातें कहीं – शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य लाभ, सद्भाव और मैत्रीपूर्ण वातावरण, और सामाजिक अलगाव को दूर करने के लिए अन्य लोगों के साथ सकारात्मक संबंध बनाने की संभावना।
- *टूल्स फॉर इनर पीस* ने यू.के. में रहने वाले शरणार्थियों के लिए एक साल का फाउंडेशन योग प्रशिक्षण शुरू किया है। इसका उद्देश्य शरणार्थियों को अपने समुदायों में योग अभ्यास सिखलाने का कौशल प्रदान करना है। प्रतिभागी दुनिया भर के देशों से आते हैं जैसे अफ़गानिस्तान, बांग्लादेश, इरिट्रिया, ईरान, नाइजीरिया, सूडान और यूक्रेन।

दिव्य जीवन मंडल – उद्देश्य * कार्यक्रम * प्रवृत्तियाँ * सन्देश

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

संस्थापक – भूमण्डलेश्वर श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती
जन्म – 16 अप्रैल, 1936
उद्देश्य – आध्यात्मिक विद्या प्रसार! भारत में 250 और विदेशों में 50 शाखाएँ अधिकृत रूप में हैं, जिनका संचालन श्री स्वामी शिवानन्द जी के तत्त्वावधान में होता है। इस मंडल के अन्तर्गत कई उपमंडल भी हैं, जो इस संस्था के लक्ष्य और उद्देश्य के प्रचार के पूरक हैं।

1. शिवानन्द प्रकाशन मंडल – वैदिक संस्कृति के उदय के लिए, धार्मिक आचार के प्रचार के लिए, इस मंडल ने श्री स्वामीजी की 200 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित की हैं, जिनमें श्री गीता का शिवानन्द भाष्य, ब्रह्मसूत्र, राजयोग और सदाचार, आरोग्य, योग तथा संस्कृति-विषयक और भी बृहद् ग्रन्थ प्रकाशित किए हैं।
2. औषधियों के पवित्र-निर्माण और उनमें शास्त्रीय विधि के अवतरण के लिए आयुर्वेद औषध निर्माणशाला है जो इस मण्डल की आर्थिक सहयोगिनी भी है।
3. निःशुल्क चिकित्सालय – पर्वत-निवासी रोगियों और तीर्थयात्रियों तथा कुष्ठ-रोगियों का एक मात्र अवलम्ब है। समय-समय पर धर्मार्थ नेत्र-चिकित्सा तथा अन्य चिकित्सा-सम्बन्धी कैम्पों का आयोजन किया जाता है।
4. शिक्षा के लिए विद्यापीठ भी है, जिसमें आस-पास के विद्यार्थी आते हैं और आदर्श-शिक्षा प्राप्त करते हैं।

Yoga is the greatest gift that can be given to mankind … It is the gift of peace.
मानवता के लिए आज योग सबसे बहुमूल्य उपहार है, … का उपहार.

5. योग-वेदान्त और सदाचार के ज्ञान को सार्वभौमिक बनाने के लिए मासिक और साप्ताहिक पत्र प्रकाशित किए जाते हैं।
   i. डिवाइन लाइफ, दिव्य जीवन पर मासिक पत्रिका
   ii. आरण्य विश्वविद्यालय साप्ताहिक – योग-वेदान्त फॉरेस्ट यूनिवर्सिटी वीकली
   iii. स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन – हेल्थ एण्ड लौंग लाइफ
   iv. मंडल शाखा समाचार – ब्रांच गजेट
   v. योग-वेदान्त हिन्दी मासिक
   vi. पाथ टु गोड रियलायज़ेशन
   vii. शिवानन्द डे टु डे
   viii. स्पीरिच्युल ट्रेन
   ix. लाइट डिवाइन इत्यादि।
6. निःशुल्क साहित्य द्वारा मंडल के सदस्य, जो बृहद् ग्रन्थों को खरीद नहीं पाते, बहुमूल्य आध्यात्मिक उपदेशों को जान जाते हैं। अतः एक विभाग ऐसा है जो प्रसार के इस अंग का उत्तरदायी है।
7. जन-साधारण को योगासनादि की शिक्षा देने के लिए चलचित्र-प्रदर्शन विभाग भी है, जो 15,000 फुट से अधिक फिल्मों द्वारा योगविषयक ज्ञान को प्रकाशित करता है।
8. भक्तों के प्रश्न-समाधान के लिए स्वामीजी पत्र व्यवहार भी करते हैं। अतः एक विभाग देश-विदेश से आए पत्रों का उत्तर महाराज के आदेशानुसार देता है।
9. शिवानन्दाश्रम दिव्य जीवन मंडल का दूसरा रूप है, जहाँ एक सौ पचास के लगभग कार्यकर्त्ता साधक रहते हैं और इस पवित्र कार्य में अपनी योग्यतानुसार पूर्ण सहयोग देते हैं। शिवानन्दाश्रम इन साधकों की दूसरी दुनिया है, जहाँ एक पिता और एक विश्वात्मकता का पाठ पढ़ाया जाता है।
10. योग-वेदान्त आरण्य विश्वविद्यालय व्यवहारशिक्षा की संस्था और मंडल का समष्टि रूप है। इसके शिक्षण-सिद्धान्त व्यावहारिक हैं, जो विद्यार्थी में लोक वासना न भर कर, त्याग का पाठ सिखलाते, परन्तु त्याग ही जीवन का विमुख अंग न मान, उसे जीवन का सहयोग और पूर्णयोगी मानते हैं। इसके विद्यार्थी विश्व के कोने-कोने में बसे हैं।

11. साधु समाज में संगठन के दृष्टिकोण से और सभी धर्मों के सामूहिक निर्माण के लिए प्रतिवर्ष मंडल की ओर से अधिवेशन होते हैं, जिनमें तत्कथित समस्याओं का समाधान होता है।
12. साल में 5 बार मंडल के सहयोगी और साधक ऋषिकेश आते हैं और स्वामीजी के सन्निधान में शिक्षा ग्रहण करते हैं। यह अवसर गुरुपूर्णिमा, नवरात्रि, साधना सप्ताह और जन्मदिन के नाम से पुकारे जाते हैं। ऐसे तो नित्य सहस्रों भक्तों का जमघट लगा ही रहता है।
13. दिव्य जीवन संदेश के प्रचार के लिए महात्माओं की मंडलियां जगह-जगह भेजी जाती हैं। वे नगर-नगर में प्रवचन, उपदेश और शिक्षा सप्ताहों का आयोजन करती हैं।
14. अखंड संकीर्तन और महायज्ञ इसका कार्य है, जो 1943 से निरन्तर चौबीसों घण्टे चला आ रहा है। इसका क्रम अविच्छिन्न रहा है।
15. पुस्तकालय, योगचित्रालय, केन्द्रिय कार्यालय तथा अन्य कई ऐसे विभाग हैं, जिनमें से सेवाभावी साधक अहोरात्र कल्याण में हाथ-से-हाथ और कन्धों-से-कन्धा मिलाते हैं। त्यागी होकर भी लोकसंग्रह उनकी अपनी विशेषता है। मंडल नित्यप्रति 300 से अधिक महात्माओं, दीनों तथा

अतिथिगणों के भोजन और जलपान का प्रबन्ध करता है, तथा साधकों के जीवन के योग्य सभी सुविधाएँ देता है।

16. समस्त मंडल का आधार और अभीप्रेरक परमपावन श्री विश्वनाथ मंदिर है, जिसमें नित्य सहस्रों आँखें नत होती हैं, भक्ति के आंसू बहाती हैं, सिर झुकते हैं तथा देवता के चरण नवाते हैं। यही दिव्य जीवन मंडल का आदि केन्द्र है।

मंडल का सिद्धान्त जनता में ईश्वरीय प्रेरणा भरना है, जिससे वे जीवन के दुःखों के कारणों को जानते हुए उनका परिहार करना सीखें। विश्व में केवल सामाजिक भावना ही नहीं भरनी है, किन्तु उसके द्रष्टिकोण को सर्वथा पवित्र तथा आध्यात्मिक कर देना है, जिससे मनुष्य और मनुष्य के बीच के भेदभावों का अन्त हो। संसार में द्वन्द्व है, उसको शान्तिमय करना है और प्रत्येक व्यक्ति इस कार्य का उत्तरदायित्व ग्रहण करे, यह मण्डल का उद्देश्य है। जनता की अनुभूतियों को पवित्र करना और उसके कार्यों को सत्य की ओर उन्मुख करना मंडल का व्यावहारिक सिद्धान्त है।

– योग-वेदान्त के मार्च 1956 अंक से साभार उद्धृत

योग अभियान 2023

कामधेनु आश्रम – कोलोम्बिया

शताब्दी वर्ष की शुरुआत से ही आश्रम विभिन्न योग अभियान परियोजनाएँ संचालित कर रहा है –

- ग्रामीण बच्चों के साथ योग, संगीत और कला;
- कोरिया में योग शिक्षकों के एक समूह के साथ ऑनलाइन मंत्र साधना। जिस समय कोलोम्बिया में रात होती है, कोरिया के शिक्षक दिन की शुरुआत *हनुमान चालीसा* के जाप से करते हैं;
- जीवन के विभिन्न पहलुओं पर मासिक रिट्रीट – दिल से जीना; अपनी जड़ों को पोषित करके स्वयं की देखभाल करना; रिश्तों में खुशी और सद्भाव पैदा करना।

सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम्

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

हमारे गुरुजी की समाधि की एक विशेषता है, उन्होंने अपने जीवन में स्वेच्छा से, जीते-जागते समाधि को प्राप्त किया। ऐसा हम केवल इतिहास में पढ़ते हैं कि योगी ध्यान की अवस्था में, मंत्रों का उच्चारण करते हुए, प्राणों को ऊर्ध्वगामी बनाकर, अपनी चेतना को परमात्मा से एकाकार कर देते हैं। पढ़ा जरूर था, लेकिन देखा कभी नहीं था। कहानी सुनी अवश्य थी, लेकिन ऐसी सुन्दर परिस्थिति का साक्षी बनने का कभी अवसर नहीं मिला था। यह संभव तब हुआ जब हमारे गुरुजी ने समाधि को प्राप्त किया। जैसा हम लोग पढ़ते थे, कहानियों में सुनते थे, ठीक उसी तरीके से उन्होंने समाधि को प्राप्त किया। ध्यान की अवस्था में, मंत्र उच्चारण के साथ, ईश्वर, गुरु और मातृ शक्ति का स्मरण करते हुए, प्राणों को ऊर्ध्वगामी बनाकर, स्वेच्छा से पूर्ण चेतन अवस्था में समाधि को प्राप्त किया।

यह मनुष्य की उस अवस्था को दर्शाता है जहाँ वह मृत्यु पर भी विजय प्राप्त कर लेता है। मृत्यु तो सबकी होती है, लेकिन मृत्यु कब आती है, किसको

कब ले जाती है, किसी को मालूम नहीं रहता। जब मृत्यु आती है तब व्यक्ति वासनाग्रस्त होकर मरता है, लेकिन समाधि में चित्त परमात्मा में एकाकार हो जाए, और इतने मंगलकारी तरीके से प्राण और आत्मा शरीर का त्याग करें, यह केवल सिद्ध पुरुष के लिए संभव है।

सिद्ध किसको कहते हैं? जो चमत्कार करता है, जादू-टोना-टोटका करता है या फिर वह जिसने अपने जीवन में सत्यम् को जाना, सुन्दरम् को जाना और शिवम् को प्राप्त किया? मनुष्य जीवन की असली सिद्धि है – अपने लक्ष्य की प्राप्ति। और लक्ष्य प्राप्ति का अर्थ है, सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् की प्राप्ति। यह केवल एक दार्शनिक विचार और आध्यात्मिक चिन्तन नहीं है, बल्कि जीवन का सत्य और यथार्थ भी है। योग का, जीवन जीने का यही प्रयोजन है कि हम सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम् को जानें – धार्मिक या दार्शनिक दृष्टि से नहीं, बल्कि व्यावहारिक दृष्टि से, जीवन्त अनुभूति के रूप में। और योग इस अनुभूति को प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त करता है।

लोग योग को आसन, प्राणायाम, ध्यान और तनाव मुक्त होने की विधियों से जोड़ते हैं। मानता हूँ यह सब संभव है, लेकिन योग यहाँ तक सीमित नहीं है। जो व्यक्ति योग को शरीर से, आसन, प्राणायाम, ध्यान, क्रिया और कुण्डलिनी आदि से जोड़ता है, वह योग के एक पक्ष का ही ज्ञान रखता है, वह भी आंशिक ज्ञान। यह ज्ञान भी वह अहंकार, वासना और कामना से प्रभावित होकर प्राप्त करता है। जब मनुष्य वासना, अंहकार, इच्छा या कामना से प्रभावित होकर योग करता है, तब केवल आसन, प्राणायाम, जप, ध्यान तक ही सीमित रहता है। उससे आगे नहीं बढ़ सकता, क्योंकि वहीं पर उसकी पूर्णाहुति हो जाती है। इच्छा क्या होती है? बीमारी है, ठीक हो जाए। शरीर कमजोर है, स्वस्थ हो जाए, स्फूर्तिमान हो जाए। चिंता, परेशानी, क्लेश, मानसिक और भावनात्मक तनाव हैं, उनसे मुक्ति मिल जाए। लेकिन यह वास्तविक योग नहीं है। यह अपनी इच्छा के अनुरूप योग है। यह भी करना चाहिए, लेकिन इतना करके फिर योग की वास्तविकता को भी जानने का प्रयास करना चाहिए। योग की वास्तविक शुरुआत होती है सत्य के अनुसंधान से।

यह सत्य आत्मा-परमात्मा का सत्य नहीं है, लौकिक-पारलौकिक नहीं है, धार्मिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक नहीं है, क्योंकि यहाँ तक कोई पहुँच नहीं पाता है। सत्य की खोज बाहर नहीं, भीतर होती है। सत्य की खोज का मतलब होता है, व्यक्ति अपने जीवन में जितने मुखौटे पहनता है – अहंकार,

मद, अभिमान, घमण्ड, प्रतिशोध, ईर्ष्या आदि के, इन सब मुखौटों को अलग कर देना और अपने वास्तविक स्वरूप को देखना। मन को समझने, मन की परिस्थिति और परिवेश को बदलने तथा मन की चंचलता को समाप्त करके स्थिर करने से मनुष्य के जीवन में सत्य की स्थापना होती है। जब तक मन स्थिर नहीं होता, जीवन चंचल रहता है और जब मन शांत हो जाए, तब जीवन शांत हो जाता है।

जीवन मन की अभिव्यक्ति

अगर आपसे पूछा जाए, 'आप कौन हैं?' तो आपका उत्तर क्या होगा? आप कह सकते हो, मैं आत्मा हूँ। मैं ईश्वर का अंश हूँ। मैं शरीर हूँ। मैं इच्छा, वासना या कामना हूँ। आप अपने आपको किसी भी रूप में पारिभाषित कर सकते हो, लेकिन जो वास्तविकता है, उसको नहीं जान सकते हो। वास्तविकता यह है कि आप अपने मन की ही अभिव्यक्ति हो, और कुछ नहीं। जब मन में काम है, तो जीवन में काम है। जब मन में क्रोध है तो जीवन में क्रोध है। जब मन में घृणा है तो जीवन में घृणा है। जब मन में शत्रुता है तो जीवन में शत्रुता है। जब मन में द्वेष है तो जीवन में द्वेष है। जब मन में शांति है तो जीवन में शांति है। जब मन में प्रेम है तो जीवन में प्रेम है। आप अपने मन के ही जीवन्त रूप हो, और कुछ नहीं।

आप आत्मा नहीं हो, क्योंकि आपको उसका अनुभव नहीं है। अब लकड़ी में अग्नि छुपी है, लेकिन अगर आप लकड़ी हो तो क्या यह कहोगे कि मैं अग्नि हूँ? लकड़ी होकर कोई यह नहीं कह सकता है कि मैं अग्नि हूँ। लकड़ी में अग्नि छुपी है, यह निर्विवाद है, लेकिन लकड़ी नहीं कह सकती है कि मैं अग्नि हूँ, क्योंकि अग्नि का अनुभव उसको नहीं है। जब अग्नि का अनुभव लकड़ी को हो जाता है तब लकड़ी फिर लकड़ी नहीं रहती, जल जाती है, भस्म बन जाती है। इसी प्रकार से, मैं आत्मा हूँ, यह कहना मन की कल्पना मात्र है, दर्शन है।

यथार्थ में आप आत्मा हो, लेकिन उसका ज्ञान आपको नहीं है और न उस तक कभी पहुँच पाओगे, क्योंकि जलना तो कोई चाहता नहीं है। अभी आप हो अपना मन। इसलिये मन को शांत करने की विधि ही आपके लिए सत्य का अन्वेषण है। जब मन शांत हो जाता है तब सारे मुखौटे हट जाते हैं। मन शांत होने के बाद सौन्दर्य की ओर ध्यान जाता है।

सौन्दर्य की परिभाषा

सौन्दर्य किसको कहते हैं? सौन्दर्य का सम्बन्ध लोग शरीर से, पदार्थ से या बाह्य वस्तु से लगाते हैं। फूल को देखेंगे, कहेंगे सुन्दर है। किसी सुन्दर वस्तु को देखेंगे, कहेंगे सुन्दर है। इसका मतलब सौन्दर्य केवल दृष्टि तक सीमित है। लेकिन क्या सौन्दर्य की यही परिभाषा है कि जो तुमको अच्छा लगे वही सुन्दर है और जो अच्छा नहीं लगे वह सुन्दर नहीं? सौन्दर्य की परिभाषा होती है, गुण का सम्मान करना। जब हम किसी अन्तर्निहित गुण का सम्मान करते हैं, तब कह सकते हैं कि सौन्दर्य का वर्णन कर रहे हैं।

एक फूल को आप देखते हो, उसके अन्तर्निहित गुण हैं – सुगन्ध, रंग, रूप। ये सब एक होकर सौन्दर्य का निर्माण करते हैं। जितने अधिक आयाम हों, उतना ही सौन्दर्य निखरता है। केवल रूप रहे, तब भी सौन्दर्य है। रूप रहे, गुण रहे, सुगन्ध रहे, रंग रहे, तो और भी सुन्दर दिखलाई देता है। जब अनेक आयामों को तुम एक साथ जोड़ते हो, तब सौन्दर्य की वृद्धि होती है। जो चीज अकेली होती है, वह सुन्दर होती है, लेकिन उसके सौन्दर्य की वृद्धि नहीं होती। इसी प्रकार से, हर मनुष्य के भीतर उसकी जो अच्छाई है, वह उसका सौन्दर्य है। तुम जो अच्छा कर्म करते हो, वह तुम्हारा सौन्दर्य है। तुम जो अच्छा सोचते हो, वह तुम्हारा सौन्दर्य है। तुम अगर किसी के बारे में बुरा सोचते हो, तो वह तुम्हारा सौन्दर्य नहीं है। तुम किसी के लिए खराब काम करते हो, वह तुम्हारा सौन्दर्य नहीं है। दूसरा अगर अच्छा काम कर रहा है, और तुम उसको प्रोत्साहित कर रहे हो तो तुम उसके भीतर के सौन्दर्य को प्रोत्साहन दे रहे हो। दूसरा परिश्रम कर रहा है और तुम जबरदस्ती उस पर दोषारोपण कर रहे हो तो तुम उसके सौन्दर्य को प्रोत्साहित नहीं कर रहे हो। जब व्यक्ति जीवन की अभिव्यक्ति का सम्मान करे और उसमें सहयोग दे तो वह सौन्दर्य कहलाता है। इस प्रकार, जब दृष्टिकोण बदल जाता है तब मनुष्य शिवत्व में अपने आपको स्थित कर पाता है।

यह योग की प्रक्रिया है, वह योग जो व्यवहारात्मक एवं साधनात्मक है। योग एक साधना है। जो इस साधना के द्वारा सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् को प्राप्त कर लेता है, वही सिद्ध और योगी कहलाता है। हमारे गुरुजी आधुनिक युग में ऐसे सिद्ध और योगी रहे हैं, जिनका जीवन योग से ओत-प्रोत रहा है। लोग कहते हैं उन्होंने योग का प्रचार किया, लेकिन हम उल्टा कहते हैं, 'स्वामी सत्यानन्द जी के कारण योग को इस युग में जीवनदान मिला है।'

और वह योग है – सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् की प्राप्ति, केवल हठयोग नहीं, केवल आसन-प्राणायाम नहीं, केवल क्रिया-कुण्डलिनी नहीं, यह तो एक सामान्य साधक भी करता है और सिखला भी देता है। समाज में ऐसे हजारों योग शिक्षक भरे पड़े हैं, जो योग की किताब लेकर, घर-घर जाकर पाँच सौ रुपये कमाने के लिए लोगों को योग सिखाते हैं। लेकिन जो पद्धति मनुष्य को उसके जीवन की पूर्णता और शुद्धता के साथ जोड़े तथा उसकी प्रतिभा को विकसित करे, वही असली योग है, और उसी योग से जीवन में पूर्णता की, सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् की प्राप्ति होती है। हमारे गुरुजी ऐसे एक उदाहरण हैं, जिन्होंने इस अवस्था को प्राप्त किया।

– 6 फरवरी 2014, गंगा दर्शन

उच्च रक्तचाप का गैर-औषधीय उपचार

डॉ. एच. एस. वसीर

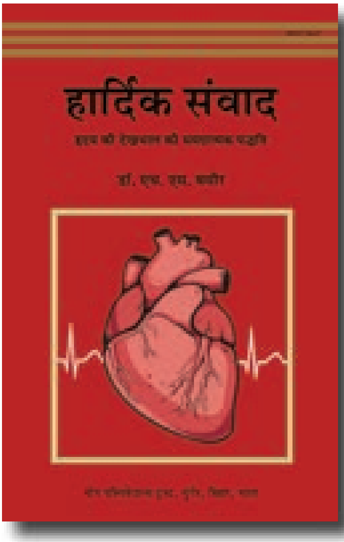

समस्त विश्व में किये गये अनेक व्यापक वैज्ञानिक अध्ययनों के आधार पर यह स्वीकार किया गया है कि वयस्कों में रक्तचाप का आँकड़ा 140/90 मि.मि. पारा से अधिक हो तो ऐसा माना जाता है कि व्यक्ति को उच्च रक्तचाप है। यदि अनुशिथिलन रक्तचाप 90 से 104 मि.मि. पारा हो तो उसे हल्का उच्च रक्तचाप कहेंगे। उच्च रक्तचाप से ग्रस्त लोगों का अधिकांश भाग (लगभग 70 प्रतिशत) इसी सीमा में आता है। इस विषय पर कोई मतभेद नहीं है कि 104 मि.मि. पारा से अधिक अनुशिथिलन रक्तचाप वाले रोगियों की चिकित्सा अत्यावश्यक रूप से औषधीय या अन्य उपलब्ध साधनों के द्वारा होनी चाहिए। किन्तु 90 से 104 मि.मि. पारा अनुशिथिलन रक्तचाप के रोगियों के लिए औषधीय उपचार के परिणाम अभी भी अन्तिम नहीं हैं, जिससे उनकी एक बड़ी जनसंख्या को इससे मिलने वाले दीर्घकालीन समग्र लाभ के बारे में निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता है।

उच्च रक्तचाप की समस्या का आकार

प्रायः सभी विकसित देशों की वयस्क जनसंख्या का लगभग 10-15 प्रतिशत हिस्सा उच्च रक्तचाप से ग्रस्त है। इनमें से आधे लोग ऐसे होते हैं जिन्हें इसकी कोई भी जानकारी नहीं होती। इसका पता उन्हें तब चलता है जब हृदयाघात या दिल का दौरा जैसी कोई जटिल समस्या अचानक उत्पन्न होती है। उच्च रक्तचाप वस्तुतः एक अप्रत्यक्ष रोग है। यदि कोई व्यक्ति सर में भारीपन, श्वासहीनता या हल्की शारीरिक थकान, कार्य में एकाग्रता की कमी, कमजोर दृष्टि और क्षुब्ध निद्रा जैसे लक्षणों का अनुभव करे तो उसे अवश्यमेव अपने रक्तचाप का परीक्षण करवाना चाहिए। भारत में गाँवों की तुलना में शहरी

क्षेत्रों में उच्च रक्तचाप की व्यापकता 3 से 6 प्रतिशत अधिक है। यहाँ 20 वर्ष से अधिक उम्र के लोगों की संख्या लगभग 33 करोड़ (1981 जनगणना) है। उच्च रक्तचाप की औसत व्यापकता लगभग पाँच प्रतिशत है। इस प्रकार हमारे देश में उच्च रक्तचाप से ग्रस्त लोगों की संख्या लगभग 1.6 करोड़ (1986) है। इसी आकलन के आधार पर हम कह सकते हैं कि उच्च रक्तचाप से पीड़ित लोगों की संख्या में प्रतिवर्ष 8 लाख की वृद्धि हो रही है। अभी भारत में उक्त रक्तचाप से ग्रस्त लोगों की संख्या कई करोड़ होगी।

उच्च रक्तचाप के उपचार की आवश्यकता

यदि उच्च रक्तचाप का यथासमय उचित उपचार न किया जाय तो इसके परिणाम स्वरूप कार्य सम्पादन में ह्रास, कमजोर दृष्टि, हृत्शूल, हदयाघात, लकवा, धमनी-काठिन्य, गुर्दे और हृदय का पात होता है। यह निर्णायक रूप से सिद्ध हो चुका है कि उच्च रक्तचाप के प्रभावी नियंत्रण से हृदयवाहिका रोगों के कारण होनेवाली रुग्णता और मृत्यु-दर में पर्याप्त कमी आती है। अतः उच्च रक्तचाप को नियन्त्रित करना नितान्त आवश्यक है ताकि हृदय, मस्तिष्क, नेत्र एवं गुर्दे के गंभीर उपद्रवों का निरोध किया जा सके।

गैर-औषधीय उपचार क्यों?

उच्च रक्तचाप के रोगियों के उपचार के लिए प्रयुक्त प्रायः समस्त औषधियों के पार्श्व-प्रभाव होते हैं। हमको यह जानना चाहिए कि शल्यक्रिया द्वारा असाधारण अवसरों पर ही उच्च रक्तचाप का उपचार किया जा सकता है और यह भी तभी सम्भव है जब प्रारम्भ में ही इसका पता लग जाय (पाँच प्रतिशत रोगियों के सम्बन्ध में ही ऐसा होता है)। लगभग 95 प्रतिशत रोगियों का उपचार आजीवन चलता रहता है। प्रतिदिन या दिन में कई बार गोली खाना वास्तव में बहुत कठिन कार्य है। साथ ही शायद ही ऐसी कोई गोली होती है जिसका यदि लम्बी अवधि तक सेवन किया जाय तो उसका कोई पार्श्व-प्रभाव न पड़े। उच्च रक्तचाप के नियंत्रण के लिए प्रयुक्त थायजाइड्स से रक्त-शर्करा, रक्त-लाइपिड्स और यूरिक अम्ल (ये सभी दिल के दौरे के सम्भावित खतरे के कारक हैं) के स्तरों में वृद्धि तथा रक्त में सोडियम और पोटाशियम के स्तरों में कमी आ सकती है। इनके परिणामस्वरूप स्पष्ट रूप से सुस्ती और पेशियों में कमजोरी उत्पन्न होती है। इस रोग में सामान्यतः प्रयुक्त बीटा-अवरोधक

नामक एक अन्य औषधीय समूह के सेवन से थकान, हाथ-पैरों की ऊँगलियों का ठंढा होना, अवसाद और विकृत काम भावना उत्पन्न हो सकती है। इस प्रकार जीवन की गुणवत्ता में कमी आती है।

ये सिर्फ गिने-चुने उदाहरण हैं। अन्य उच्च रक्तचाप प्रतिरोधी औषधियों का भी अवांछित पार्श्व-प्रभाव पड़ता है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि उच्च रक्तचाप की इन औषधियों को त्याग सकते हैं। इन महत्त्वपूर्ण औषधियों की सहायता से ही प्रतिवर्ष हजारों लोगों के जीवन की रक्षा होती है। अति गंभीर एवं सामान्य रूप से गंभीर उच्च रक्तचाप के उपचार में विभिन्न औषधियों की उपयोगिता पूर्णतः सिद्ध हो चुकी है। किन्तु अल्प उच्च रक्तचाप (अर्थात् 90 से 104 मि.मि. पारा के अनुशिथिलन चाप) के उपचार के प्रसंग में उनकी भूमिका के बारे में निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता है। उच्च रक्तचाप ग्रस्त जनसंख्या के प्रमुख भाग के रूप में इसी अल्प उच्च रक्तचाप वाले लोगों का समूह है। उच्च रक्तचाप से पीड़ित लोगों की कुल संख्या का 70 प्रतिशत अल्प उच्च रक्तचापवालों का है। इस प्रकार भारत में उनकी संख्या लगभग 1.5 करोड़ है। उनका निम्न चाप 90 से 104 मि.मि. पारा की सीमा में है। क्या इन 1.5 करोड़ लोगों के रक्तचाप को कम करने के लिए (अर्थात् अनुशिथिलन चाप को 90-104 मि.मि. पारा से कम कर 90 मि.मि. पारा से नीचे लाने के लिए) औषधियों का उपयोग किया जाना चाहिए? जबकि इनसे होने वाले लाभ के बारे में निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता और यदि कुछ होता भी है तो वह न्यूनतम है। औषधियों से रक्तचाप में निश्चय ही कुछ मि.मि. की कमी आयेगी, किन्तु इसके साथ ही कामेच्छा एवं समग्र शारीरिक कार्य निष्पादन जैसे अन्य महत्त्वपूर्ण मानवीय काम-काजों में कमी आती है। रक्त-शर्करा, इलेक्ट्रोलाइट और सीरम रक्त वसाकण असामान्यता जैसे जैवरासायनिक पक्षों में भी अनेक परिवर्तन होते हैं। इस पृष्ठभूमि में ऐसी विधियों की खोज करनी है जिनसे चाप नियंत्रण हो सके और उनका कोई गंभीर पार्श्व-प्रभाव भी न पड़े।

रक्तचाप-नियंत्रण के गैर-औषधीय उपाय

यदि जाँच के बाद पता चले कि किसी व्यक्ति का रक्तचाप ऊँचा है तो सर्वप्रथम उपाय यही होना चाहिए कि किसी प्रकार की हड़बड़ी न की जाय तथा रक्तचाप के कुछ और पठन लिये जायें। यदि रक्तचाप की निम्न सीमा 90-104 मि.मि.

पारा हो और ई.सी.जी. में हृद्वाहिका दबाव नहीं मिले या आँखों और गुर्दे में क्षति के कोई चिह्न नहीं हों और रोगी में कोई विशिष्ट लक्षण भी नहीं हो तो ऐसी परिस्थितियों में औषधियों का उपयोग नहीं होना चाहिए। ऐसे रोगियों की देख-भाल गैर-औषधीय विधियों से की जानी चाहिए। इन विधियों की अनुशंसा वैसे उन रोगियों के लिए भी की जाती है जिनका रक्तचाप काफी ऊँचा हो तथा जो रक्तचाप को कम करने के लिए औषधियों का सेवन कर रहे हों। इन अतिरिक्त विधियों को अपनाने से उच्च रक्तचाप निरोधक औषधियों की मात्रा को कम करने में सहायता मिलती है।

ऐसी अनेक गैर-औषधीय विधियाँ हैं जो रक्तचाप कम करने में सहायक होती हैं तथा सामान्य व्यक्तियों का रक्तचाप भी नहीं बढ़ने देती हैं। इनमें वजन-नियंत्रण, नमक (सोडियम) का सीमित उपयोग, आहार में पोटाशियम की अधिक मात्रा, रेशेदार वस्तुओं से युक्त शाकाहारी भोजन, सीमित मदिरा-पान, नियमित शारीरिक व्यायाम, ध्यान और योग जैसे शिथिलीकरण के अभ्यास शामिल हैं।

यह एक दिलचस्प बात है कि संसार में सभ्यता की मुख्य धारा से अलग रहने वाली कुछ ऐसी भी जनजातियाँ हैं जहाँ उम्र के साथ रक्तचाप में वृद्धि नहीं होती है तथा उच्च रक्तचाप उनके लिए एक काल्पनिक चीज है। इस जन समुदाय की कुछ विशेषतायें हैं जैसे औद्योगीकृत समाज से दूर रहना, ऐसा आहार ग्रहण करना जिसमें सोडियम की मात्रा कम और पोटाशियम तथा सब्जियों की मात्रा अधिक होती है, पर्याप्त शारीरिक व्यायाम करना और शारीरिक स्थूलता का अभाव।

वजन-नियंत्रण

विभिन्न समूहों के लोगों पर किये गये अन्वेषणों से पता चला है कि शारीरिक वजन का रक्तचाप की वृद्धि से सीधा सम्बन्ध होता है। अनेक चिकित्सात्मक शोधों से सिद्ध हुआ है कि वजन में कमी आने से रक्तचाप नीचे आता है। जैसा कि अनेक युद्धों के समय देखा गया है कि भूखमरी और आंशिक भूखमरी के परिणामस्वरूप वैसे अनेक लोगों का रक्तचाप सामान्य हो गया जो उच्च रक्तचाप से पीड़ित थे। रक्तचाप को कम करने के साथ-साथ वजन घटाने से रक्त-कोलेस्ट्रॉल और रक्त-शर्करा के स्तरों में भी गिरावट आती है। ये दोनों दिल के दौरे के खतरनाक कारण हैं।

नमक का सीमित उपयोग

अल्प मात्रा में नमक लेनेवाले लोगों का उच्च रक्तचाप कम होता है और यह बात विलोम रूप में भी सही है। लेकिन व्यक्तिगत स्तर पर उच्च रक्तचाप के एक कारक के रूप में नमक की भूमिका अभी तक प्रमाणित नहीं हो सकी है। सम्भवतः आनुवांशिक रूप से कुछ ऐसे पूर्वप्रवृत्त लोग होते हैं जो नमक के प्रति संवेदनशील होते हैं और जब वे अधिक नमक का उपयोग करते हैं तो उनका रक्तचाप ऊँचा हो जाता है। चूँकि नमक का उपयोग कम करने से किसी प्रकार की हानि नहीं होती है, अतः सामान्यतः नमक के अतिसेवन (5-6 ग्राम प्रतिदिन से अधिक) से बचना चाहिए। ऐसा करने से नमक के प्रति संवेदनशील बहुत-से लोगों का रक्तचाप ऊँचा नहीं होगा।

पोटैशियम की मात्रा

शायद ही ऐसा कोई आहार होता है जिसमें सिर्फ सोडियम के अतिरिक्त अन्य लवण न हों। अन्वेषणों से प्रमाणित हुआ है कि निम्नतर सोडियम/पोटैशियम अनुपात ही रक्तचाप के लिए लाभदायक होता है, न कि सिर्फ सोडियम की कमी। अतः यह पाया गया है कि उच्च रक्तचाप के कुछ रोगियों के रक्तचाप को घटाने में अधिक पोटैशियमयुक्त आहार और पोटैशियम सम्पूरक सहायक होते हैं। चूहों की एक उपजाति पर, जो आनुवंशिक रूप से स्वतः उच्च रक्तचापयुक्त होते हैं, कुछ प्रयोगात्मक अध्ययन किये गये। उन्हें अधिक पोटैशियम युक्त आहार दिया गया। इससे उनको होने वाले लकवा की मात्रा में स्पष्ट रूप से कमी आ गयी।

आहार

हम यह अच्छी तरह जानते हैं कि कुल मिलाकर अधिकांशतः मांसाहारी लोगों की तुलना में, शाकाहारी लोगों का रक्तचाप निम्नतर होता है। ऐसा सम्भवतः इसलिए होता है कि शाकाहारी भोजन में बहु-असंतृप्त वसा, रेशेदार खाद्य पदार्थ और पोटैशियम अधिक मात्रा में रहते हैं। यह प्रमाणित किया गया है कि अधिक शर्करायुक्त आहार से मनुष्यों और पशुओं दोनों का रक्तचाप बढ़ता है। ऐसा सम्भवतः जल और नमक के प्रतिधारण तथा उच्च अनुकंपी सक्रियता के कारण होता है।

मदिरा की भूमिका

अनेक उपचारात्मक अध्ययनों से सिद्ध हुआ है कि प्रतिदिन 30-60 ग्राम से अधिक मात्रा में मदिरा के सेवन का वाहिका-दाबवर्धी प्रभाव पड़ता है और रक्तचाप में वृद्धि होती है। यह अनुमान किया जाता है कि उच्च रक्तचाप का 5 से 10 प्रतिशत कारण मदिरा का अतिसेवन है। यह भी एक प्रमाणित तथ्य है कि मदिरा का सेवन नहीं करने से रक्तचाप सामान्य हो जाता है। अतः उच्च रक्तचाप को नियन्त्रित करने की एक प्रमुख गैर-औषधीय विधि है कि या तो मदिरा का सेवन पूर्णतः बन्द कर दिया जाय या इसे प्रतिदिन दो औंस से कम मात्रा तक सीमित रखा जाय।

शारीरिक व्यायाम और शिथिलीकरण

नियमित गतिशील व्यायाम से उच्च और निम्न रक्तचाप दोनों ठीक होते हैं। यह एक ज्ञात तथ्य है कि तनावपूर्ण परिस्थितियों के कारण उच्च रक्तचाप की स्थिति उत्पन्न होती और बनी रहती है। योग, ध्यान और योगनिद्रा जैसी शिथिलीकरण की विधियों के लाभकारी प्रभाव की अवधारणा इसी जानकारी पर आधारित है। विगत दो दशकों में किये गये अनेक अन्वेषणों से प्रमाणित हुआ है कि शिथिलीकरण की इन विधियों के अभ्यास से प्रकुंचन और अनुशिथिलन रक्तचाप दोनों में विभिन्न मात्राओं की कमी आती है। जो लोग पूर्व से ही उच्च रक्तचाप प्रतिरोधी औषधियाँ ले रहे हैं वे यदि शिथिलीकरण की इन विधियों का अभ्यास करते हैं तो उनकी औषधि-आवश्यकता कम हो जाती है।

जिन अनेक गैर-औषधीय विधियों का ऊपर वर्णन किया गया है उन्हें रक्तचाप से पीड़ित समस्त रोगियों की देख-भाल के सन्दर्भ में एक चिकित्सात्मक पद्धति का स्वरूप दिया जाना चाहिए। अल्प उच्च रक्तचाप के रोगियों के लिए सिर्फ ये उपाय ही पर्याप्त हो सकते हैं और इस प्रकार उच्च रक्तचाप प्रतिरोधी औषधियों के पार्श्व-प्रभावों से उनका बचाव भी हो सकता है। पूर्व से ही रक्तचाप घटाने वाली औषधियों का सेवन करनेवाले रोगी यदि इन गैर-औषधीय विधियों को उपचारात्मक साधन के रूप में नियमित प्रयोग करें तो उन्हें औषधियों की मात्रा और संख्या को कम करने में सुविधा होगी।

योग सूत्र मीमांसा

स्वामे सत्यानन्द सरस्वती

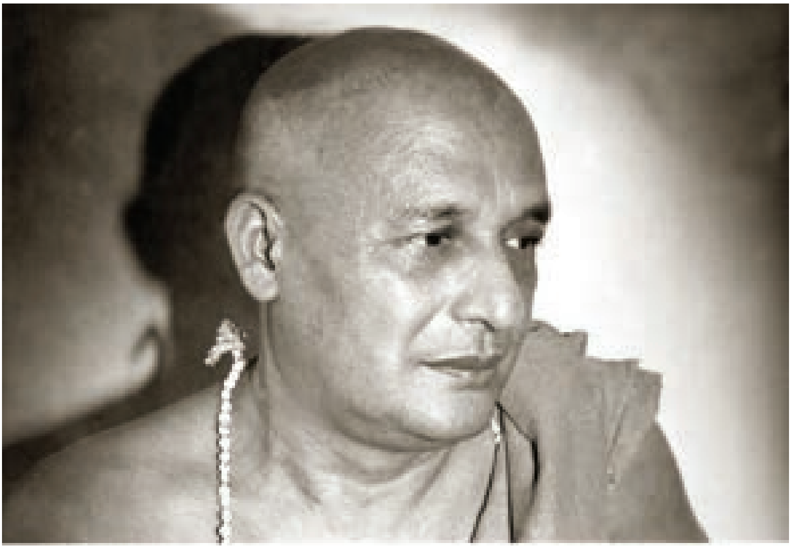

योग एक ऐसी अपूर्व विद्या है, जिसमें पुरुष और प्रकृति के संयोग के वियोग को ही योग बतलाया है। वैसे योग का अर्थ जोड़ना अथवा मिलाना होता है, परन्तु, इसका सच्चा अर्थ है समाधि, जिस स्थिति में अविद्या द्वारा उत्पन्न पुरुष और प्रकृति की संयोग-ग्रन्थि विलीन हो जाती है।

योग के इस सच्चे अर्थ, समाधि को प्राप्त करने के लिए गुरु को शिष्य का सतर्कता से चुनाव कर उसे नियंत्रण-पूर्वक शिक्षा देनी पड़ती है। यह पर्याप्त नहीं कि शिक्षा दे दी, बल्कि गुरु को समाधि का अनुशासन शिष्य को देना पड़ता है।

मन, बुद्धि और अहंकार, जिसे मैं चित्त कहूँगा, अन्तःकरण के भी नाम से जाना जाता है और इस अन्तःकरण के कार्यों को वृत्ति कहा जाता है। ये वृत्तियाँ जो सदैव चंचल रहती हैं, समाधि में निरुद्ध हो जाती हैं, जिसे योगाभ्यास के द्वारा प्राप्त किया जाता है।

चित्त की पाँच अवस्थाएँ हैं – क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र और निरुद्ध। क्षिप्त अवस्था में चित्त-वृत्तियाँ विषयाकार होकर चंचल और उन्मत्त रहती हैं। मूढ़ अवस्था में निद्रा, आलस्य और प्रमाद के प्रभाव से मन्द रहती हैं। विक्षिप्त

अवस्था में चित्त-वृत्तियाँ कभी विषयाकार रहती हैं और कभी स्थिर। एकाग्र अवस्था में चित्त-वृत्तियाँ सब तरफ से सिमट कर केवल एक ओर, चंचलता के अभाव में, लग जाती हैं। निरुद्ध अवस्था में चित्त की वृत्तियाँ विषयों के अभाव में शान्त हो जाती हैं, और बिना आधार के रहती हैं।

योगाभ्यास का आरम्भ, यदि सच कहा जाय तो एकाग्र अवस्था से आरम्भ होता है, जिसमें चंचल और अस्थिर मन को विभिन्न विषयों में भटकने से रोककर एक ही ओर लगने का अभ्यास कराया जाता है। इसके पूर्व की तीनों अवस्थाएँ संसारी जीवों की होती हैं, जिन्हें कर्म और भक्ति के अलावा अन्य किसी मार्ग में अधिकार नहीं। अन्तिम अवस्था वृत्तियों के निरोध की है, जिसका फल असम्प्रज्ञात समाधि और बाद में धर्ममेघ समाधि है।

चित्त वृत्तियाँ

चित्त की 'दर्शन'-रूप वृत्ति को नियन्त्रित कर द्रष्टा आत्मा और दृश्य-विषयों के संयोग को तोड़कर योग की साधनाओं से द्रष्टा आत्मा आत्म-स्थिति में प्रकाशित होने लगता है। द्रष्टा का सम्बन्ध दृश्य से बने रहने के कारण, वह वृत्तियों की स्वरूपता में प्रतिभासित होता है। किन्तु जब अन्तःकरण वृत्तिहीन हो स्वयं रुक जाता है, उस समय अन्तर्यामी पुरुष वृत्तिसारूप्य से मुक्त होकर अपने स्वरूप में रहता है।

अन्तःकरण की ये वृत्तियाँ पाँच तरह की होती हैं, अर्थात चित्त पाँच प्रकार से वृत्तिमय और कार्यशील होता है। अन्तःकरण के कार्य ही अन्तःकरण की वृत्तियाँ हैं और वे जब चित्त को सुखदायी होती हैं तो 'अक्लिष्ट' कहलाती हैं, और जब दुःखदायी होती हैं तो 'क्लिष्ट' कहलाती हैं।

अन्तःकरण ज्ञान, विपरीत ज्ञान, काल्पनिक ज्ञान, अज्ञान और स्मृत ज्ञान के द्वारा जिन्हें क्रमशः प्रमाण-वृत्ति, विपर्यय-वृत्ति, विकल्प-वृत्ति, निद्रा-वृत्ति तथा स्मृति-वृत्ति के नाम से जाना जाता है, एक-एक प्रकार के वृत्ति-सारूप्य को प्राप्त करता है, जो उसके धर्म बन जाते हैं।

जब अन्तःकरण किसी विषय को इन्द्रियों के माध्यम से प्रत्यक्ष में जानता है, तब उस समय उसकी प्रत्यक्ष-ज्ञान-प्रमाण-वृत्ति रहती है। जब अन्तःकरण किसी विषय को पूर्ववत् अनुमान, शेषवत् अनुमान अथवा सामान्यतोदृष्ट अनुमान के सम्बन्ध से जानता है, तब उस समय उसकी अनुमान-प्रमाण-वृत्ति रहती है। जब अन्तःकरण किसी विषय को आगमों के माध्यम से, जो आप्त

पुरुषों के वचनों के रूप में अध्यात्म-शास्त्रों की परम्परा में चले आते हैं, जानता है तब उस समय उसकी आगम-प्रमाण-वृत्ति रहती है।

जब अन्तःकरण अविद्या से भरपूर होकर किसी विषय को उसके विपरीत स्वरूप में जानता है, तब उस समय उसकी मिथ्या प्रतीति को विपर्यय-वृत्ति कहते हैं। वस्तु जब अपने विपरीत स्वभाव में अनुभूतिगम्य होती है, तब उसे विपर्यय-वृत्ति का प्रभाव जानना चाहिए।

किसी भी वस्तु का ज्ञान उसके नाम अथवा रूप से होता है। किन्तु कभी रूप के न रहने पर भी नाम से ही अन्तःकरण ज्ञान को पा लेता है। अन्तःकरण के द्वारा प्राप्त ऐसे ही ज्ञान को चित्त की विकल्प-वृत्ति कहा गया है। अर्थात् जब वस्तु के अभाव में भी चित्त की वृत्तियाँ केवल नाम को आधार बना कर वृत्ति-सारूप्य को प्राप्त करती हैं, तब विकल्प-वृत्ति ही सक्रिय रहती है।

जाग्रत अवस्था में चित्त इन्द्रियों के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करता है और स्वप्नावस्था में इन्द्रियों के सो जाने पर वह स्वयं अपने अनुभवों का दर्शन करता है। किन्तु जब निद्रा आ जाती है, तब अन्तःकरण की यह वृत्ति भी लुप्त हो जाती है और वह केवल अभाव की अनुभूति कर सक्रिय रहता है। अभाव की अनुभूति को ही निद्रा-वृत्ति कहते हैं, अर्थात निद्रा चित्त की अवस्था-विशेष है।

अन्तःकरण जिस-जिस भाव को प्राप्त होता है, वह उसकी वृत्ति है और उसी से अनुभवों का जन्म होता है, तथा वही अनुभव संस्कार बन कर चित्तभूमि में ग्रथित हो जाते हैं, और जब-जब चित्त उन संस्कारों व अनुभवों से सारूप्य स्थापित करता है, तब-तब उसकी वृत्ति स्मृति रूप रहती है।

अन्तःकरण की यह वृत्ति याने स्मृति चित्त में प्रतिदिन अनेकों बार सक्रिय रहती है और हमारा जीवन अनुभवों के स्मरण से अत्यन्त प्रभावित रहता है, इतना प्रभावित रहता है कि जीवन का पूरा राग-द्वेष इसी वृत्ति का परिणाम है।

यद्यपि चित्त नवीन ज्ञान से भी प्रभावों को प्राप्त होता है, जो इन्द्रियों के माध्यम से उसे प्राप्त होते रहते हैं, किन्तु उस पर सबसे अधिक प्रभाव स्मृति का ही पड़ता है; अतः चित्त की अन्य वृत्तियों के निरुद्ध हो जाने पर भी कोई लाभ नहीं दीखता, जब तक स्मृति तथा संस्कारों का पूर्णतः निरोध न हो जाय।

साधना की निष्ठा अथवा ध्येय विषय में चित्त के लग जाने से प्रमाण-वृत्ति, विवेक-बुद्धि से विपर्यय-वृत्ति, वस्तु के स्वरूप के ज्ञान से विकल्प-वृत्ति, योगनिद्रा से निद्रा-वृत्ति का निरोध तो जल्दी हो जाता है, परन्तु स्मृति-वृत्ति का

निरोध वैराग्य के बिना नहीं हो सकता और स्मृति-वृत्ति के निरोध हुए बिना चित्त समाहित नहीं हो सकता।

पंच क्लेश

कथित पाँचों भाव दोषयुक्त और निर्दोष होते हैं। चित्त वृत्तियों के दोषों को अविद्या और उससे उत्पन्न अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश के नाम से जाना जाता है। अर्थात् अविद्या आदि पाँचों दोषों से सारूप्य प्राप्त होने पर चित्त की वृत्तियाँ दोषयुक्त और क्लेश का कारण बनाती हैं, और इसी प्रकार इन पाँचों के मुक्त हो जाने पर वे निर्दोष और अपार सुख का उदय करती हैं।

अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश, जिन्हें समझाया जायेगा, चाहे प्रसुप्त हों अथवा मंद, विचलित हों अथवा तीव्र, किसी भी अवस्था में उनकी उत्पत्ति अविद्या से ही होती है। अविद्या मूल क्लेश है, तथा अन्य क्लेश उसके परिणाम।

अविद्या क्या है? अनित्य विषयों को नित्य, अपवित्र को पवित्र, दुःखदायी को सुखदायी और अनात्म वस्तुओं को आत्म-वस्तु समझना, संक्षेप में किसी भी विषय के वास्तविक स्वरूप को न जानकर उसमें उसके विपरीत स्वरूप की प्रतीति करना अविद्या है। राग और द्वेष से प्रभावित होकर चित्त की भूमिका में विषयों की उल्टी जानकारी होती है, यही उल्टी जानकारी अविद्या के नाम से जानी जाती है।

अविद्या भाव-तत्त्व है और इसका स्वभाव ही है सत्य को असत्य और असत्य को सत्य समझ लेना। अविद्या-भाव के कारण ही हम जीवन में दुःख पाते हैं, हमारा अन्तःकरण मिथ्या ज्ञान और विपरीत ज्ञान को ग्रहण कर लेता है। सांख्य शास्त्र में इसे अष्टधा 'तम' कहते हैं, क्योंकि अपरा प्रकृति अष्टधा होती है।

अस्मिता है विषय-दर्शन की शक्ति को द्रष्टा की क्रिया समझना। द्रष्टा आत्मा कोई क्रिया नहीं करती। अन्तःकरण ही ज्ञानेन्द्रियों से विषय-ज्ञान प्राप्त करता है। किन्तु जीव अन्तःकरण के धर्मों को अपने में आरोपित कर अन्तःकरण के ही प्रभाव से स्वयं को कर्त्ता मान लेता है। इसी मान्यता को अहंकार याने अस्मिता कहते हैं। इसी मान्यता से जीव अपने में अन्तःकरण के धर्मों से उत्पन्न फलाफल का आरोप कर स्वयं को सुखमय और दुःखमय मानता है। सांख्य शास्त्र में इसे अष्टधा 'मोह' कहकर सूचित किया गया है।

राग और द्वेष भी चित्त की वृत्तियों को क्लिष्ट बना देते हैं। प्राप्त सुख की कामना राग है और प्राप्त दुःख से अनिच्छा द्वेष। पूर्वानुभूत सुखों का स्मरण कर जब उनके पीछे भावना जाती है तो राग से उत्पन्न क्लेश होते हैं। पूर्वानुभूत दुःखों का स्मरण कर जब भावना में उनके प्रति तिरस्कार जागता है तो द्वेष से उत्पन्न क्लेश होते हैं। सांख्य शास्त्र में राग को 'महामोह' और द्वेष को 'तामिस्र' कहा गया है।

जन्म-जन्मान्तर से प्राप्त हुए मृत्यु के स्मृति-रूप भय से विद्वान् पुरुष भी उतना ही घबड़ाते हैं, जितना एक अबोध बालक अथवा पशु। इसी पूर्वानुभूत मरण-भय की भावना से अभिनिवेश नामक क्लेश की उत्पत्ति होती है, जिससे अन्तःकरण सदैव क्षुब्ध रहता है। सांख्य में इसे 'अन्धतामिस्र' की संज्ञा दी गई है।

इन्हीं पाँचों क्लेशों से चित्त-वृत्तियाँ तीन गुणों को प्राप्त होकर विषय-दर्शन का कारण बनती हैं और जीव को बन्धन में फँसाए रहती हैं। किन्तु जब वे इन पाँचों जनों के फन्दे से मुक्त हो जाती हैं तो आत्मदर्शन का साधन बनती हैं।

चित्त की अवस्थाएँ

चित्त में स्थिरता और चंचलता, दोनों धर्म निहित हैं, जैसे जल में वाष्प और बर्फ दोनों परिणाम विद्यमान हैं। अथवा जैसे वाष्प और बर्फ दोनों परिणामों में जल रूप कारण अनुगत रहता है, वैसे ही क्षिप्तादि परिणामों में चित्त रूप कारण ही अनुगत रहता है। अतः चित्त धर्मी हुआ और यह परिणाम उसके धर्म। अतीत, वर्तमान और अनागत परिणामों में जो अनुगत रहता है, उसे ही धर्मी अथवा कारण कहते हैं। तरंगों, आवर्त्तों तथा जल के तमाम परिणाम जैसे और कुछ नहीं मात्र जल के धर्म हैं और जल ही उन धर्मों के आधार रूप में विद्यमान रहता है, वैसे ही एकाग्र, विक्षिप्त अथवा अन्य चित्त-परिणाम भी और कुछ नहीं, चित्त के धर्म-विशेष, लक्षण-विशेष और अवस्था-विशेष हैं।

परिणामों में भिन्नता का कारण है क्रम की भिन्नता। एक ही कार्य को विभिन्न क्रम से करने से विभिन्न परिणाम दिखते हैं। रुई एक क्रम के द्वारा वस्त्र-परिणाम बनती है और दूसरे क्रम से बाती और तीसरे क्रम से डोरी। ऐसे ही चित्त भी एक क्रम से चंचलता और दूसरे क्रम से स्थिरता की प्राप्ति करता है।

चित्त के समस्त धर्म, जो कहे गए हैं, वास्तव में और कुछ नहीं, त्रिगुणात्मक ही हैं। एक-एक गुण के जागने और दबने से ये धर्म भी जागते और दबते रहते हैं। रजोगुण के जागने से क्षिप्त, तमोगुण के जागने से मूढ़, रजोगुण में

सत्त्वांश से विक्षिप्त, सत्त्व के जागने पर एकाग्र, और केवल सत्त्व के रहने से निरोध-रूप धर्म चित्त में स्वतः व्यक्त और अव्यक्त होते रहते हैं। अथवा यह कहा जाय कि चित्त के धर्म त्रिगुणों के परिणाम हैं।

जब कभी कोई धर्म परिणाम को प्राप्त होता है तो उसका स्वरूप परिणाम के अन्त में समझ में आता है। एक क्षण के बाद दूसरा क्षण, उसके बाद तीसरा – इसी तरह क्षणों का जो प्रवाह है, उसे ही क्रम कहते हैं। चित्त में क्षण-प्रतिक्षण परिवर्तन हो रहा है, किन्तु हमें उसकी जानकारी तभी होती है, जब परिवर्तनों का एक क्रम पूरा हो जाता है। क्षिप्त आदि धर्म चित्त के परिणाम हैं जो एक क्रम से होते रहते हैं। एक परिणाम उत्पन्न होता, पुनः क्रमशः दूसरे परिणाम में जाकर बदल जाता है।

चित्त के क्रमानुसार चार परिणाम होते हैं। तमोगुण और रजोगुण की प्रधानता से चित्त की व्युत्थान अवस्था होती है। तमोगुण तथा रजोगुण के साथ सत्त्व का प्रभाव रहने से जब समाधि के संस्कार जागने लगते हैं, तब उसे चित्त का समाधि-परिणाम कहते हैं। तत्पश्चात् जब सत्त्व तमोगुण को दबा कर प्रबल होता है तो उसे चित्त का एकाग्रता-परिणाम जानो। और जब केवल सत्त्वगुण शेष रहता है तो चित्त निरोध-परिणाम को प्राप्त होता है। जैसे शैशव एक देह-परिणाम है, कौमार्य दूसरा, यौवन तीसरा, बुढ़ापा चौथा, रोग पाँचवा, मृत्यु छठा, वैसे ही चित्त क्रमशः व्युत्थान से समाधि-परिणाम को, उससे एकाग्रता-परिणाम को, और उससे निरोध-परिणाम को प्राप्त होता है।

जब चित्त सब प्रकार के विषयों का चिन्तन करता है, अथवा कुछ काल के लिए निद्रा में सुप्त हो जाता है, तो योगीजन उसे चित्त की व्युत्थान अवस्था कहते हैं। जब सब प्रकार के विषयों का चिन्तन करने वाली वृत्ति का क्षय और एक ध्येय विषय का चिन्तन करने वाली एकाग्रता का उदय होता है तो जानना चाहिए कि चित्त समाहित होता जा रहा है। और जब चित्त भली भाँति ध्येय में समाहित हो जाता है, उस समय एकाग्रता की अवस्था का अवतरण होता

है। यह अवस्था समाधि-परिणाम की परिपक्व अवस्था है, इसमें दबने और उभरने वाली वृत्तियाँ केवल एकाग्रता की होती हैं। समाधि-परिणाम की तरह विषयाकारिता और एकाकारिता का जागना-सोना नहीं होकर, केवलमात्र निर्विषय एकाग्रता ही कभी हल्की और कभी गहरी होती है।

निर्विषय एकाग्रता के दबने पर चित्त की वृत्तियाँ सर्वथा रुकने लगती हैं और निरोध के संस्कार प्रकट होते हैं, किन्तु यह सहसा नहीं होता। कभी एकाग्रता, तो कभी वृत्तियों का अभाव। यह क्रम अभ्यास-काल में चलता रहता है। अन्ततः चित्त की एकाग्रता-रूप वृत्ति दबकर निरोध-संस्कारों के उदय को जन्म देती है। यही चित्त का निरोध-परिणाम है।

इस तरह आदि-व्युत्थान के संस्कार समाधि-परिणाम में, समाधि-परिणाम के संस्कार एकाग्रता-परिणाम में और एकाग्रता-परिणाम के संस्कार निरोध-परिणाम में क्रमशः बदलते जाते हैं। अन्त में निरोध-संस्कारों के परिणाम-स्वरूप केवल निर्मल और शान्त धारा बहती है।

वैराग्य और अभ्यास

चित्त के जिन परिणामों का उल्लेख किया गया, उनमें वैराग्य मूलभूत कारण है। वैराग्य की जितनी ऊँचाई होगी, उसी के अनुसार चित्त के परिणाम निर्विकल्प समाधि में पहुँचेंगे। अपर-वैराग्य से इन्द्रियों का दमन होता है, और पर-वैराग्य से मन का शमन। पर-वैराग्य के प्रवृत्त होने से पूर्व और पुरुष-दर्शन के साथ-साथ ऋतम्भरा नामक बुद्धि के संस्कार प्रकट होते हैं, जिसके द्वारा ज्ञानेन्द्रियों के अभाव में भी विषयों का बोध होता है। यह प्रज्ञा त्रिगुणात्मिका इन्द्रियों के पूर्णाभाव में भी पूर्ण ज्ञानमयी रहती है और भूत, भविष्यत् तथा दूरस्थ पदार्थों का भी विलक्षण ज्ञान रखती है। पुरुषख्यातिजन्य ऋतम्भरा प्रज्ञा के संस्कार पूर्व के कर्माशय का नाश कर देते हैं, जिससे पर-वैराग्य प्रकट होता है।

जब ऋतम्भरा प्रज्ञा के संस्कार से पूर्व के कर्माशय का बाध हो जाता है, तब ऋतम्भरा प्रज्ञा के संस्कार भी स्वयम्भूत अनासक्ति से रुक जाते हैं, और संसार-बीज का सर्वथा अभाव हो जाने से निर्बीज-समाधि प्रकट होती है।

आत्म-साक्षात्कार कर लेने पर योगी को सम्पूर्ण गुणों के स्वामित्व और ज्ञान की प्राप्ति होती है। यहाँ पर भी उसे इस लाभ के प्रति वैराग्य को प्रवृत्त करना पड़ता है। इसके बाद धर्ममेघ समाधि है। योगी को जब स्वामित्व और सर्वज्ञत्व से भी वैराग्य होता है, तब अविद्या-आदि क्लेशों से उत्पन्न दोष

सर्वथा नष्ट हो जाते हैं और कैवल्य की प्राप्ति होती है। पुरुष का गुणों के साथ आत्यन्तिक वियोग ही कैवल्य है।

वैराग्य की पराकाष्ठा, यही कैवल्य या धर्ममेघ समाधि है। इसमें पुरुष-दर्शन के उपरान्त ऋतम्भरा प्रज्ञा से भी राग टूट जाता है और तदुपरान्त तद्-वैराग्यजन्य विलक्षण सामर्थ्य से भी योगी सर्वथा विरक्त हो जाता है। अतः आत्मज्ञान अचल और केवल हो जाता है। ठीक इस मुहूर्त्त में धर्ममेघ समाधि याने कैवल्य का अवतरण होता है।

वैराग्य के विषय में चर्चा हो गई। अब अभ्यास की चर्चा होगी। अभ्यास दो प्रकार के होते हैं। उत्तम अधिकारियों के लिए ध्यानात्मक और मन्द साधकों के लिए क्रियात्मक अभ्यास। जो नहीं करना है उसे नहीं करना वैराग्य हुआ, और जो करना है, उसे करना अभ्यास। वैराग्य की विधि निषेधात्मक है और अभ्यास विधि-आत्मक। चित्त की वृत्ति को चलायमान करने वाले विषयों में अरुचि है वैराग्य और चित्त में स्थिरता ले आने वाले साधनों में रुचि है अभ्यास। वैराग्य और अभ्यास, दोनों द्वारा चित्त-वृत्तियों का निरोध किया जा सकता है।

चित्त की प्रसन्नता से अभ्यास में प्रगति होती है। अतः चित्त को बारम्बार अप्रसन्न रखने वाले चित्त के मलों को अभ्यास के साथ-साथ दूर कर लेना चाहिए। अन्यथा साधना-काल में चित्त की कलुषता से खेद उत्पन्न होता है और अभ्यास में कुछ-न-कुछ ढिलाई हो जाती है। राग, ईर्ष्या, परापकार की इच्छा, असूया, द्वेष, अमर्ष – ये चित्त को विक्षिप्त बना देते हैं और अंतःकरण में मल को उत्पन्न करते हैं। अतः साधक को इन उपायों का अवलम्बन करना चाहिए – सुखी को देखकर उन पर मित्रता की भावना का आरोप करने से राग तथा ईर्ष्या का निराकरण होता है, दुःखी को देखकर दया भाव का आरोप करने से घृणा का निवारण होता है, पुण्यात्मा को देखकर उनके प्रति हर्ष की भावना करने से असूया का निवारण होता है और पापात्मा को देखकर उनके प्रति उपेक्षा की भावना करने से द्वेष तथा अमर्ष का निवारण होता है।

इस तरह अन्तःकरण के अनिष्ट प्रसंग का नाश कर देने से चित्त-भूमि में प्रसन्नता और निर्मलता आ जाती है। तब साधक को चित्त की स्थिरता के लिए बारम्बार प्रयत्न करना चाहिए। चित्त को स्थिर करने के लिए जो भी अभ्यास किये जाएँ, उनमें काल क्रम से जो दृढ़ता आती है वही समाधि-चित्त की भूमि बनती है, इसलिए चित्त की एकाग्रता के अभ्यासों को बहुत समय तक, लगातार और आदरपूर्वक करना चाहिए।

दान सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सूचना

आश्रम के लिए दान राशि केवल निम्नलिखित श्रेणियों के अन्तर्गत स्वीकार की जाएगी –

1. **सामान्य दान**
   जो बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन को दिया जा सकता है और जिसका उपयोग यौगिक गतिविधियों के विकास एवं संवर्द्धन के लिए किया जाएगा।

2. **मूलधन निधि के लिए दान**
   बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन की मूलधन निधि के लिए। **मूलधन निधि** से प्राप्त ब्याज राशि का उपयोग संस्था/न्यास की सभी गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

3. **सी.एस.आर. दान**
   जिसका उपयोग सी.एस.आर. गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

इसलिए भक्तों से निवेदन है कि वे केवल उपर्युक्त श्रेणियों के अन्तर्गत अपनी दान राशि भेजें।

बिहार स्कूल ऑफ योग को दान 'SB Collect Online Donation Facility' के माध्यम से निम्नलिखित वेबसाइट द्वारा सीधे दिया जा सकता है – **https://www.onlinesbi.sbi/sbicollect/icollecthome.htm?corpID=2277965**

आप चेक, डी.डी. अथवा ई.एम.ओ. द्वारा भी दान दे सकते हैं जो **बिहार स्कूल ऑफ योग**, **बिहार योग भारती**, **योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट** या **योग रिसर्च फाउण्डेशन** के नाम से हो और मुंगेर में देय हो।

दान राशि के साथ एक पत्र संलग्न रहे जिसमें आपके दान का प्रयोजन, डाक पता, फोन नम्बर, ई-मेल और PAN नम्बर स्पष्ट हों।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

हार्दिक संवाद

डॉ. एच. एस. वसीर

पृष्ठ 138, ISBN: 978-81-85787-66-4

अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली के हृदय-रोग विभाग के प्रोफेसर डॉ. एच. एस. वसीर द्वारा रचित यह पुस्तक दिल के दौरे एवं उच्च रक्तचाप के मूल में निहित विशिष्ट कारणों तथा उनके नियंत्रण हेतु एक निरोधात्मक पद्धति की रूपरेखा प्रस्तुत करती है। इस पुस्तक का उद्देश्य दिल के दौरे से सम्बन्धित अनेक खतरनाक कारकों तथा पर्यावरणीय प्रभावों के प्रति सामान्य जागरूकता और सजगता उत्पन्न करना है ताकि लोग हृदय तथा रक्तचाप से सम्बन्धित अनेक रोगों से अपनी रक्षा कर सकें।

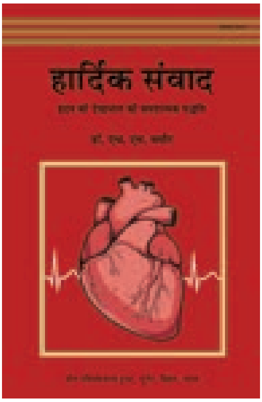

उपलब्ध

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें –
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
दूरभाष : 9162783904, 9835892831

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा

BIHAR YOGA

वेबसाइट और एप्प

www.biharyoga.net

बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर बिहार योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद

बिहार योग परम्परा के समस्त ऑडियो, वीडियो तथा पुस्तक प्रकाशन प्रसाद रूप में *satyamyogaprasad.net* वेबसाइट पर तथा *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में प्रस्तुत हैं।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन

www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/

योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए) एवं कार्यक्रम

- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, ए.पी.एम.बी. अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है
- *Bihar Yoga* एप्प साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है
- *For Frontline Heroes* एप्प कोरोनावायरस के विरुद्ध अभियान में संघर्षरत कार्यकर्ताओं के लिए सरल योग अभ्यास प्रस्तुत करता है जो महामारी से उत्पन्न तनाव को सम्हालने में सहायक हैं
- स्वस्थ जीवन हेतु *biharyoga.net* तथा *satyamyogaprasad.net* पर *यौगिक जीवनशैली साधना* का कार्यक्रम उपलब्ध है

• Registered with the Registrar of Newspapers, India
Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

योगपीठ कार्यक्रम एवं योग विद्या प्रशिक्षण 2024

बिहार योग विद्यालय योगविद्या प्रशिक्षण

जुलाई 2022–दिसम्बर 2024	*आश्रम जीवन प्रशिक्षण*
जुलाई 18–जनवरी 18 2025	*योग चक्र अनुभव*
अक्टूबर 3–12	*राज योग एवं भक्ति योग प्रशिक्षण*
अक्टूबर 6–12	*राज योग यात्रा 5*
अक्टूबर 17–30	*प्रगतिशील योग विद्या प्रशिक्षण*
नवम्बर 3–10	*क्रिया योग एवं ज्ञान योग प्रशिक्षण*

बिहार योग भारती योगविद्या प्रशिक्षण

अगस्त 7–अक्टूबर 7	*द्विमासिक यौगिक अध्ययन (हिन्दी)*

कार्यक्रम

नवम्बर 17–23	*मुंगेर योग संगोष्ठी*

मासिक कार्यक्रम

प्रत्येक शनिवार	*महामृत्युंजय हवन*
प्रत्येक एकादशी	*भगवद् गीता पाठ*
प्रत्येक पूर्णिमा	*सुन्दरकाण्ड पाठ*
प्रत्येक 4, 5 एवं 6 तारीख	*गुरु भक्ति योग*
प्रत्येक 12 तारीख	*अखण्ड रामचरितमानस पाठ*